मानव मन्दिर

5/87

वैशाखी विशेषांक

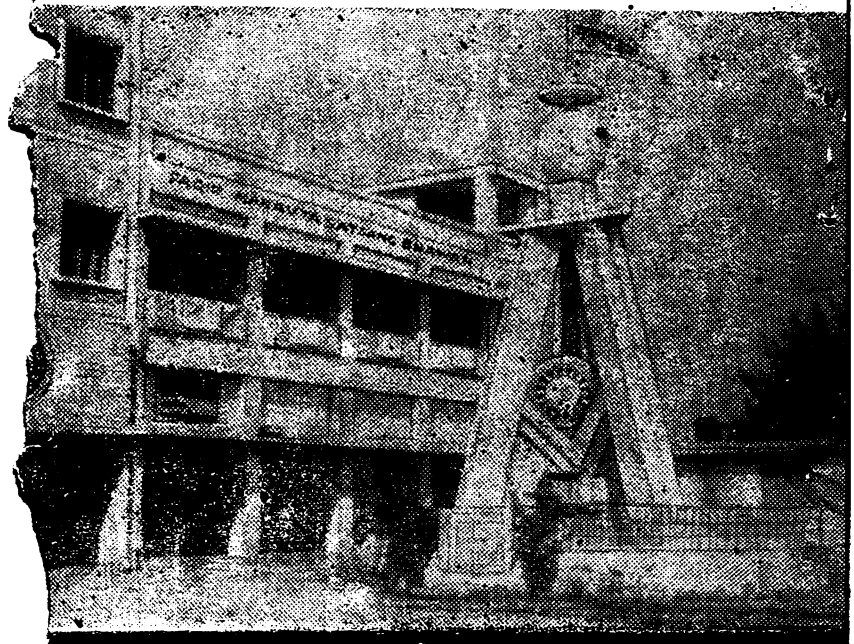

सृष्टि (रचना) का उद्देश्य

फकीर लायब्रेरी चैरीटेबल ट्रस्ट

सुतहरी रोड, होशियारपुर

द्वारा अमूल्य भेंट

प्रकाः परम ... याल पं: फकीर चन्द जी महा...

FORM I

(See Rule 8)

Place of Publication	Hoshiarpur
Date of Publication	10th of every month
Periodicity of Publication	Monthly
Printer's Name	Dr. Paras Ram Aggarwal
Nationality	Indian
Address	Manavta Mandir. Hoshiarpur.
Editor's Neme	Dr. Paras Ram Aggarwal
Nationality	Indian
Address	Manavta Mandir, Sutehri Road, Hoshiarpur.
Name and address of individuals, who own the Manav Mandir of partners of shareholders, holding more than one Percent of the total capital	- Faqir Library Charitable Trust, Hoshiarpur.

I, Dr. Paras Ram Aggarwal hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

Dated : Signature of Publisher

Printed and Published by : Dr. Paras Ram at Shiv Dev Rao Press, Manavta Mandir Hoshiarpur, for the Faqir Library Charitable Trust, Hoshiarpur.

मानवता मन्दिर में अगला मासिक सत्संग
19-4-87 को होगा ।

Se ...habda Yoga

... U.S.A. June 1983

Sitting L. to R. : Ms. Gloria Albritton, (2) and (3) Satsangees, H.H. Manav Dayal ji M... Dr. I. C. Sharma, Mrs. Bhagya Sharma.

Standing L. to R. : Col. Joseph Tueker Acharya, Mr. Gilbert Ridge gaard Ach... (4,5,6,) and (7) Satsangees.

H. H. Manav Dayal Dr. I. C. Sharma ji Maharaj delivering his Presidential address at Gurukul Kangari University, Haridwar.

मासिक—

मानव मन्दिर

विश्व में मानव मात्र के सामाजिक सांस्कृतिक
और आध्यात्मिक कल्याण और विकास की
सेवा में संलग्न मासिक पत्र

सम्पादक :
डा० परस राम अग्रवाल

सत्संग हजूर दाता दयाल महर्षि शिवव्रत लाल जी महाराज

(गतांक मार्च 87 पृष्ठ 9 से आगे)

(4)

शब्द शिरोमणि तो तीर की तरह सीधा चला। सुरत शिरोमणि को उसके हाथ का डंडा धकेलता हुआ ले चला। आगे शब्द शिरोमणि था और सुरत शिरोमणि छाया की तरह उसके पीछे था। दोनों ने दम के दम में बेहदो हिसाब सफर तय किया और दोनों ही ताज़ा दम थे। थकावट की मांदगी (कमज़ोरी) ने नाम के लिये भी उन पर हमला नहीं किया और इस तरह कूद-फाँद करते हुए वे टीले की चोटी पर जा धमके। यह जगह प्रकाश वाली थी, नूर का वो आलम था जिसका कोई हिसाब नहीं। आँखों को खैरगी होने लगी यानि आँखें चुंधियाने लगीं।

सुरत शिरोमणि ने ऊपर से नीचे की ओर देखा। गो हर चीज़ बड़ी सफाई के साथ नज़र आ गई लेकिन अजदहा नहीं दिखाई दिया। सुरत शिरोमणि को आश्चर्य हुआ, पूछने लगा "हम इस क़दर ऊपर चढ़ आये हैं, रोशनी इस क़दर ज़्यादा है कि कहीं भी तारीकी (अन्धेरे) का या छाया का निशान तक नहीं दिखाई देता लेकिन अजदहा का अभी तक कहीं पता नहीं।"

शब्द शिरोमणि ने जवाब दिया "सुरत शिरोमणि ! तुम बड़े जल्दबाज हो इस प्रकाश में अजदहा नहीं दिखाई देता, उसके देखने की रोशनी विशेष प्रकार की होती है।"

सुरत शिरोमणि—"यहाँ इस क़दर अधिकता के साथ रोशनियों के जमाव का कारण क्या है ?"

शब्द शिरोमणि—"नीचे की रोशनियों की इस स्थान की रोशनियों के साथ वही विशेषता है जो एक चिराग़ (दीपक) की हज़ारों दीपकों के साथ है। इसलिए यहाँ की रोशनी को नीचे की तमाम इकट्ठी रोशनियों के मुकाबले में हज़ारगुणा ज़्यादा होना चाहिए। यह कोई आखिरी पड़ाव नहीं है। अभी और आगे चलना है। यहीं तीन अन्धी औरतें रहती हैं। और बारी-२ से लाल शवचिराग़ (रात्रि दीपक) को अपने-२ माथे से लगा कर दुनिया का तमाशा देखती रहती हैं। यह लाल शवचिराग़ तुमको इनसे लेना होगा। ये तुमको अजदहे का पता बतायेंगी और लाल शव चिराग़ की रोशनी में तुम अजदहे को देख कर मार सकोगे।

सुरत शिरोमणि—"ये औरतें कौन हैं और इनके नाम क्या हैं और ये अन्धी क्यों हैं ?"

शब्द शिरोमणि—"इन औरतों के बारे में मैं अधिक नहीं कह सकता। इनमें से एक का नाम सुलोचना, दूसरी का नाम मन्दलोचना, तीसरी का नाम कुलोचना है।"

सुरत शिरोमणि—"आँख ना दीदा नो सूजा का" यह वही मिसाल है "आँख नदारद, नाम नैनसुख" अभी आपने कहा है कि ये अन्धी और आँखों से हीन हैं और अभी आप कहते हैं इनके नाम सुलोचना (नेक नज़र), मन्दलोचना (कमज़ोर नज़र) और कुलोचना (बुरी नज़र) हैं।

शब्द शिरोमणि—"मैंने झूठ थोड़े ही कहा है। वे अन्धी हैं लेकिन जब अपनी पेशानी (मत्थे) से लाल शव

चिराग़ को लगा लेती हैं तो इन्हें सारी दुनिया दिखाई देने लगती है। प्रकृति ने इन्हें ऐसा ही बनाया है।

सुरत शिरोमणि—"बातों में तो वक्त ही खराब होता है। अब और आगे चलिये।

और दोनों ऊपर की ओर रवाना हुए।

(5)

जिस ऊँचे टीले का ज़िक्र आ चुका है गो रोशन बहुत था लेकिन उसकी पीले रंग की रोशनी पहले आँखों को चकाचौंध देने वाली थी। अब जो मुकाम आया उसकी रोशनी पूरे तौर पर लाल रंग की थी और आँखों के लिए हानिकारक नहीं थी। रोशनी की धारें अजीब अन्दाज़ से आ रही थीं और इन्द्रधनुष की रंगत का तमाशा नज़र आ रहा था।

दोनों और ऊपर चढ़ गये, वहाँ प्रकाश कम था और एक कोने में तीन औरतें बैठी हुई नज़र आईं। वह क्या थीं, और क्या नहीं थीं। सुरत शिरोमणि अच्छी तरह उनको समझ न सका, सिर्फ उसे इतना ही मालूम हुआ कि औरतें हैं। दो औरतें तो हाथों से कुछ टटोल रही थीं। तीसरी औरत के चेहरे पर एक विशेष प्रकार का नूर ज़ाहिर था और उसकी आँखें अन्धेरे में चीते की आँखों जैसी थीं। दोनों औरतें कह रही थीं "बहिन सुलोचना, अब तुम लाल हमें दो। बहुत देर तक तुमने उसे अपने चेहरे से लगा रखा है, हम भी तो देखें-भालें कि दुनिया में क्या हो रहा है।"

सुलोचना कहती थी—"तुम जल्दी क्यों करती हो। तुमसे सब्र नहीं होता। कुलोचना और मन्दलोचना बोलीं—"यह निर्णय की बात नहीं है, हम तीनों को मिलजुल कर रहना है।"

सुलोचना—"तो यह झगड़ा क्यों है! लो अब तुम

अपनी पेशानी से लाल शवचिराग़ को लगाओ। मुझे डर है हमारी पीठ के पीछे कुछ लोग आ रहे हैं, मुझे घूमकर देखने का मौका नहीं मिलता क्योंकि तुम लड़ने-झगड़ने लग गई, सावधानी से रहना कहीं यह तुम्हारे हाथ से गिर न पड़े।

मन्दलोचना ने अपनी पेशानी से लाल शवचिराग़ को लगाया बोल उठी "आहा कैसा अच्छा तमाशा है।"

उसने अभी अपनी बात समाप्त नहीं की थी कि टटोलती हुई कुलोचना का हाथ मन्दलोचना की पेशानी पर लग गया और वह चील-झपट्टे की तरह छीन कर उसे अपनी पेशानी पर लगाकर हैरतअंगेज बातें करने लगी।

शब्द शिरोमणि ने सुरत शिरोमणि के कान में झुककर कहा—"अब वक्त है कि तुम कुलोचना के हाथ से लाल शवचिराग़ फौरन छीनो और अगर कहीं गलती कर गये और ये संभल बैठीं तो उसका हाथ आना मुश्किल होगा।"

शब्द शिरोमणि ने पीछे से लपक कर लाल शवचिराग़ छीन लिया और कुलोचना उसी वक्त मन्दलोचना और सुलोचना को बुरा-भला कहने लगी "तुम दोनों बड़ी स्वार्थी हो इतनी जल्दी क्यों लाल शवचिराग को मेरे हाथ से छीन लिया।"

सलोचना और मन्दलोचना दोनों मुकर गईं "वह हमारे पास तो नहीं है तुम बहाना कर रही हो।"

तीनों में झगड़ा होने लगा। सुरत शिरोमणि ने सामने आकर कहा "बीबियो! आपस में लड़ो-झगड़ो नहीं। लाल शवचिराग छीनने वाला मैं हूँ वह मेरे हाथ में है।"

तीनों डर गईं, "तुम कौन हो और क्यों यहाँ आये हो?"

सुरत शिरोमणि ने उत्तर दिया मुझ से कहा गया जब तक तुम तीन अन्धी औरतों का लाल शवचिराग न छीन

लोगे वे तुम्हारे काबू में न आयेंगी और जब तक काबू में न आयेंगी तब तक पाँच मुँह वाले अजदहे का पता न लगेगा और न तुम उसे मार सकोगे, तुम मुझे बताओ वह कहाँ है ? तब मैं यह लाल शवचिराग तुमको वापिस दे दूंगा।

तीनों औरतें घबरा गईं—"बाप रे बाप ! तुम बेरहम डाकू होगे तुमको पहले ही से दो आँखें मिली हैं। हम तीनों के दर्म्यान सिर्फ यही आँख लाल शवचिराग है, रहम करो उसे वापिस दे दो।

सुरत शिरोमणि "देने को तो मैं दे दूंगा लेकिन पता बताओ कि पाँच मुँह वाला अजदहा कहाँ है। जब मैं उसे मार लूंगा उसी वक्त तुम्हें दे दूंगा।

तीन औरतें—"हम अन्धी औरतें हैं। हमको क्या पता अजदहा कहाँ रहता है और वह क्या चीज़ है।"

सुरत शिरोमणि "तो फिर चलो हवा खाओ। जब तक पता न बताओगी तब तक मैं लाल शवचिराग तुम्हें न दूंगा।

तीनों रोने और चिल्लाने लगीं "मियाँ मुसाफिर हम पर रहम करो, देखो अजदहा बड़ा खूंखार है। अगर कहीं तुम उसकी पकड़ में आ गये तो फिर तुम्हारा ठिकाना न रहेगा। इस अजदहा के पाँच मुँह हैं। एक मुँह से तो वह डरावना शब्द करता है—शोर करता है, दूसरे मुँह से आँधी की तरह झोंके निकालता है, तीसरे मुँह से वह आग के शोले बरसाता है, चौथे मुँह से पिचकारी की शक्ल में चपचपे पानी का हड़ बहाता है कि आदमी उसमें फँस-फँसाकर फिर बेकाम हो जाता है और पाँचवें मुँह से वह पत्थर, कंकड़ और ढेले फेंकता हुआ आदमी को मार देता है। किसी ने आज तक उसे नहीं मारा। वह सबको पकड़-पकड़ कर खा गया। तुम्हारी क्या हैसियत है जो उस पर काबू पा सको। ब्रह्मा, विष्णु, महेश तक उसका नाम सुनकर

काँप उठते हैं इसलिए अपने ऊपर रहम करो और उसे मारने से बाज आओ।"

सुरत शिरोमणि "मैंने तुम्हारी बातें सुन लीं, तुम तीनों की तीनों झूठी हो। पहले तो तुम कहती थीं कि अजदहे से अनजान हैं और हमको गुमराह करना चाहती हो, धोखा देना चाहती हो। बताओ तो बताओ नहीं तो लाल शबचिराग से हमेशा के लिए हाथ धो बैठो।"

औरतों ने फिर ज़्यादा शोर मचाना शुरू कर दिया। सुरत शिरोमणि को दया आ गई। उनकी बेकसी की हालत पर तरस खाकर उसने लाल शवचिराग के देने की नीयत कर ली लेकिन शब्द शिरोमणि ने उसको डाँटा। खबरदार! मौका पाकर मौके से फायदा न उठाना सख़्त नादानों का काम है। अगर इस बार चूक गये तो फिर यह लाल शव चिराग तुम्हारे हाथ न आयेगा और न अजदहा मरेगा। और न तुमको अपने सवालों का जवाब मिलेगा।"

सुरत शिरोमणि—महतात (सावधान) हो गया और कुछ देर खामोशी के साथ खड़ा हुआ इनके बाबेला के शोर को सुनता रहा। आखिर वे रो-धो कर चुप हो गईं और बोलीं—"मालूम हो गया तुम हमारी मानने वाले नहीं हो इसलिए हम तीनों मिलकर बैठती हैं। हम तीनों के सिर मिलकर एक टीले की शक्ल बन जायेगी। तुम उस पर चढ़ जाओ और वहाँ से नीचे की तरफ निगाह करो। पँचमुँहा अजदहा कुण्डली मारे हुए तुमको दिखाई देगा। लेकिन ऐसा न हो कि उसे देखकर तुम खौफ में आ जाओ और हाथ से लाल शवचिराग छूट जाये फिर न हमारी खैरियत है न तुम्हारी। हम तो अन्धी की अन्धी ही बनी रहेंगी और तुमको अजदहा

निगल जायेगा।"

(6)

तीनों औरतें मिलकर बैठ गईं। सुरत शिरोमणि शब्द शिरोमणि के हाथ का डण्डा लेकर उसकी मदद से उनके सिर के टीले पर आ रहा और बाद को शब्द शिरोमणि भी उसके साथ वहाँ खड़ा हो गया।

शब्द शिरोमणि ने इशारा किया। सुरत शिरोमणि की निगाह नीचे की तरफ गई और उसने देखा कि वास्तव में नीचे एक बहुत बड़ा गड्ढा है जिसकी थाह लेना मानवीय बुद्धि से बाहर है। और एक पाँचमुहों का अजदहा वहाँ कुण्डली मारे हुए पड़ा है और उसकी सूरत-शक्ल अत्यन्त डरावनी थी। एक तो यूंही नीचे देखने में सिर चकराने लगता है दूसरे वहां इतना खतरनाक शत्रु। सम्भव था कि सुरत शिरोमणि गश खाकर अजदहे के किसी मुँह में गिर जाता परन्तु उसने अपने हाथों से ज़ोर के साथ लाल रोशनी वाला चिराग पकड़ रखा था और उसके प्रभाव से संभला रहा और दूसरे शब्द शिरोमणि का साथ सबसे अधिक शक्ति देने वाला था। लोग कहते हैं तिनके का सहारा बहुत होता है और यहाँ तो हमजिन्स की मदद का सहारा था।

लाल रोशनी वाले चिराग को हाथों से दबाये हुए सुरत शिरोमणि ने अजदहे की तरफ बड़े गौर से देखा वह कसमसा उठा। उसका एक मुँह तो बन्द का बन्द पड़ा रहा परन्तु दूसरे चारों मुँह खुल गये। किसी से पानी, किसी से आग, किसी से आँधी और किसी से घनघोर कड़ाके की आवाज़ आने लगी। आग, पानी और हवा के झोंके ऊपर की ओर उठे परन्तु लाल रोशनी वाले चिराग की कुछ ऐसी तासीर थी कि वह नीचे ही नीचे रह गये और उसको कोई हानि न पहुँचा सके। यह अवस्था बहुत देर तक रही आखिर अजदहा खुद-ब-खुद ठण्डा हो गया। उसे बेदम पाकर शब्द

शिरोमणि ने पूछा "अब तुम प्रश्न करो और मैं तुमको उत्तर दूंगा।"

सुरत शिरोमणि ने जवाब दिया "अब मुझे प्रश्न करने की ज़रूरत नहीं रही। जो जानना था जान लिया, जिसे पहचानना था पहचान लिया, जो कुछ मानना था मान लिया। प्रश्नोत्तर का सिलसिला आज से हमेशा के लिए खतम हो गया :—

1. कौतुक देखा देह बिन, बिना नैन बिन कान।
ऐसे अद्भुत चरित्र का, कैसे होय बखान॥
2. बिन इन्द्री का खेल है, बिन बस्ती का देश।
बिना देह का पुरुष है, कहे कबीर सन्देश॥
3. घट में औघट पाया, औघट माहीं घाट।
कहें कबीर परिचय भया, गुरु दिखाई बाट॥
4. कबीर मन मधुकर भया, करे निरन्तर बास।
कमल खिला है नीर बिन, निरखे कोई दास॥
5. आया था संसार में, देखन जग का रूप।
सन्त समागम सों पड़ा, नज़र अलेख अनूप॥
6. सुरत समानी निरत में, अजपा माहीं जाप।
लेख समाना अलख में, आपा माहीं आप॥
7. सुरत समानी निरत में, निरत रही निरधार।
सुरत निरत परिचय भया, खुल गया सिन्धु द्वार॥
8. कौतुक देखा देह बिन, रवि शशि बिना अजास।
साहिब सेवा माहीं है, बेपरवाही दास॥
9. उलट समाना आप में, पड़ गई जोत अनन्त।
साहिब सेवक एक संग, खेलें सदा बसन्त॥
10. नून गला पानी भया, बहुरि न भरिहै गौन।
सुरत शब्द मेला भया, काल रहा गहि मौन॥

11. अलख लगा लालच लगा, कहत न आवे बैन ।
निज मन धँसा स्वरूप में, सतगुरु दीन्ही सैन ।।

12. गुण इन्द्री सहज गये, सतगुरु करी सहाय ।
घट में नाम प्रकट भया, बक बक मरे बलाय ।।

(7)

तशरीह (व्याख्या)

सुरत शिरोमणि—चेला । शब्द शिरोमणि—गुरु ।
अजदहा—मन । अजदहा के पाँच मुँह—काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार ।
मोह—मिट्टी, लोभ—पानी, क्रोध—अग्नि; काम—हवा
अहंकार—आकाश ।
तीन औरतें—सत, रज, तम (तीन गुण) ।
लाल (रात्रि) शवचिराग—तीन गुणों का ज्ञान ।
डण्डा शब्द ।
नाक की सीध का पहला स्थान—सहस दल कमल ।
नाक की सीध का दूसरा स्थान—त्रिकुटी जहाँ पहुँचने से यह मन रूपी अजदहा लाचार और बेदम हो जाता है ।

शोक सूचना

सत्संगियों को दुःख के साथ सूचित किया जाता है कि हैदरावाद निवासी श्री छंगामल जी ने तारीख 25-2-87 को चोला छोड़ दिया है । वे पुराने सत्संगी और हजूर परमदयाल जी महाराज एवं हजूर मानव दयाल जी महाराज के परम भक्त थे ।

मानवता मन्दिर के सभी सत्संगी मालिक से प्रार्थना करते हैं कि उनकी आत्मा को शान्ति दें तथा उनके शोकाकुल पारिवारिक जनों एवं सम्बन्धियों को इस असह्य दुःख को सहन करने की शक्ति प्रदान करें ।

जनरल सेक्रेटरी
मानवता मन्दिर

सत्संग परमदयाल

फकीर चन्द जी महाराज

(गतांक माह मार्च 87 पृष्ठ 15 से आगे)

सन्तमत क्यों फैलेगा ?

इस राधास्वामी मत अथवा सन्तमत की शिक्षा की अधिकारी आम जनता नहीं है। प्रत्यक्ष में चाहे बहुत लोग सत्संगी कहलाते हों मगर उनको खबर भी नहीं है कि उनको जाना किस ओर है और इस सृष्टि में उनकी क्या हैसियत है। वह टेकी और पक्षपाती होकर पथभ्रष्ट हो रहे हैं। इस मार्ग में चलने का कोई-कोई अधिकारी है। यही कारण है कि योग्य गुरु नाद नों और मूर्खों पर इस शिक्षा को प्रकट नहीं करते मगर इसके प्रचार के लिए इसे आम लोगों में बखेरा जा रहा है ताकि आम लोगों में से खास व्यक्ति निथर आवें और वह इस शिक्षा से लाभान्वित हो सकें।

राधास्वामी दयाल कह गये कि राधास्वामी मत फैलेगा। यह सच्ची बात है। क्यों फैलेगा ? इसका कारण है कि दुःखी जीव, जिनको कष्टों से छुटकारा प्राप्त करने की सूझेगी, इधर झुकेंगे और शान्ति प्राप्त करेंगे। इस मार्ग में शान्ति का सामान मौजूद है। वे शान्ति प्राप्त करने वाले लोग औरों को खींच लायेंगे जिससे यह सिलसिला बढ़ता

जायेगा। दूर क्यों जाते हो आज से 40-50 वर्ष पहले की ओर दृष्टि डालिये, राधास्वामी मत को उस समय कौन जानता था और अब की दशा देख लीजिये। खैर ! अभिप्राय तो यह है कि दुःखी लोगों को सुख, चैन और शान्ति प्राप्त हो, वर्ना सन्तों ने भी इस मत को फैलाकर क्या लेना है।

साधु कौन

यों कहलाने को तो बहुत से साधु-सन्त हैं मगर सच्चे साधु-सन्तों की संख्या बहुत ही कम है। यदि कहीं इनकी संख्या अधिक होती तो दुनिया में इतना दुःख, कष्ट और बेचैनी जो आज देखने में आ रही है दिखाई न देती। झूठ-मूठ साधु कहलाना अच्छा नहीं। इससे न तो साधु कहलाने वाले व्यक्ति का भला होगा न दूसरों का भला होगा।

इस विषय पर स्वामी जी महाराज की बाणी सुनिये :--

तुम साधु कहावत कैसे। मैं पूछूं तुम से ऐसे ॥
मान न छोड़ो क्रोध न छोड़ो। कुटिल बचन नहिं सहते ॥
कोमल चित्त न कोमल बोली। दया भाव नहिं लैसे ॥
आप पुजावत काहु न पूजत। माँग माँग धन जोड़त पैसे ॥
काम न छूटा लोभ न छूटा। मोह ईर्षा डारत पीसे ॥
भजन भक्ति अभ्यास न करते। कभी न छूटो तुम इस जम से
घर छोड़ा उद्यम पुनि छोड़ा। मेहनत कोई न करते ॥
देश विदेश फिरो झख मारत। कफन पहिन क्यों लाज लगाते
दंभ कपट छल हिरदे वसता। गिरही[1] को आचार दिखाते ॥
चौके से हम रोटी खावें। रोटी पूरी भेद समझते ॥
बुद्धि विचार न गुरु मिला पूरा। गिरही की भय लज्जा करते
साधु चरण अठशठ[2] से उत्तम, भूमि पवित्र जहाँ पग धरते ॥
तुम तो कर्म भर्म में भटके। साधु नाम अपना क्यों धरते।

---

(1) गृहस्थी (2) हिन्दुओं के अड़सठ तीर्थ।

काल ठगौरी[1] डाली तुम पै । भेष बनाय जगत को ठगते ।।
अब कुछ समझ करो सतसंगत । डरो जरा नर्कन के दुख से ।।
विरह भाव वैराग सम्हालो । भक्ति करो और भागो जग से ।।
मन को मारो इन्द्री बाँधो । सुरत लगाओ शब्द अधर से ।।
तब चित कोमल बुद्धि निरमल । आप होय छूटो मन ठग से ।।
अब क्या कहूँ कहा मैं बहुतक । अधिकारी माने एक तुक[2] से ।।
जो निलज्ज कपटी जग मारे । वह क्या जाने भूत पशू से ।।
राधास्वामी कहत सुनाई । मानेंगे कोई हंस बचन से ।।

संगत का प्रभाव

संगत या संग का प्रभाव बड़ा प्रबल है । जैसी संगत होगी वैसा ही प्रभाव मनुष्य में आना लाजिमी है । आप एक रूपवती या किसी दूसरी स्त्री की ओर अथवा उसके फोटो की ओर ध्यान से देखिये । इससे आपके कामाँग में जागृति होगी मगर यह आवश्यक नहीं कि उस स्त्री को आपके अन्दर उत्पन्न होने वाले काम (भोग) या आपकी सूरत की जानकारी हो । मैं समझता हूँ कि इसी प्रकार साधु-महात्माओं के दर्शनों से आपको लाभ होता है और यह आवश्यक नहीं कि उनको आपके अन्दर उत्पन्न होने वाले लाभ की जानकारी होती रहती हो ।

माँगना बुरा है । भीख माँगने वालों को साधु नहीं कहते । क्यों ? क्योंकि साधु किसी के आगे हाथ नहीं फैलाता । साधु दातार होते हैं । जो साधु भीख माँगता हो उसकी संगत तो दूर रही उसके पास होकर तक न निकलना चाहिए अन्यथा आप की दशा गिरनी शुरू हो जायेगी । मैं चाहता हूँ कि श्री दीवान चन्द जी, श्री पीरे मुर्गा साहिब, श्री कृपाल सिंह जी, श्री कृषक जी उच्च कोटि के साधु

(1) ठगई (2) बात, संकेत ।

बने। साधु वह होता है जिसके हृदय में संसार का हित मौजूद हो और दूसरों का भला चाहन वाला हो ताकि जो व्यक्ति उनके दर्शन करे उसमें रेडीयेशन (Radiation) के सिद्धान्त के अनुसार उनका प्रभाव उसमें प्रवेश कर जाये। आपने तपेदिक के रोगियों को देखा होगा। उनके शरीर से रोग के परमाणु निकलते रहते हैं और उनकी संगत में रहने वालों पर उसका गहरा प्रभाव पड़ता है।

यह न समझिये कि मैं साधुओं का शत्रु हूँ अथवा उनके विरुद्ध आवाज़ उठाता हूँ। सच पूछिये तो मुझे किसी से शत्रुता नहीं है। मैं उनस क्या बुरे से बुरे आदमी से भी प्रेम करता हूँ। सच्चे साधु बड़े पारखी होते हैं। ऐसी दशा में उनसे शत्रुता का प्रश्न ही कब उठता है? मेरा कहना तो बनावटी साधुओं से है और वह भी इसलिए कि वे बनावटी ढंग से दूसरों पर प्रभाव डालकर अपनी व दूसरों की हानि न करते रहें। यदि ऐसे साधुओं में तनिक भी सच्चाई होगी तो मेरी बातों को सुनकर प्रसन्न होंगे।

जो साधु या महात्मा निष्पक्ष और निर्लोभी है केवल वही दूसरों का हित कर सकता है। मैं किसी को क्या देता हूँ? केवल हित। जो जिस भाव को लेकर आता है उसको उसकी पूर्ति करने को अपना हित देता हू। यदि कोई दुःखी आता है उसे उत्साहित करता हूँ। किसी को शान्ति की आवश्यकता है तो शान्ति प्राप्त करने के लिए हित देता हूँ। यदि कोई साँसारिक गरज लेकर आता है तो उसे उसी प्रकार का हित देता हूँ जिससे उसका काम बन जाये। यदि उसका काम नहीं बनता तो समझ लीजिये कि या तो दोष उसका है कि उसने विश्वास से काम नहीं लिया या मेरा है कि मैं सच्चा नहीं। सच्चे फकीर के क्या लक्षण होते हैं वह नीचे के शब्द से प्रकट होंगे जो दाता दयाल (महर्षि शिव)

ने मुझको लिखकर भेजा था :—

फकीर के लक्षण

तू फकीर है मेरे प्यारे, सुन फकीर की बानी।
साधु कहें फकीर को भाई, साधु जग सुखदानी ॥
पर उपकारी जन हितकारी, गुरु के आज्ञाकारी।
अवगुन त्यागी, गुन के ग्राही, दया भाव चित्त धारी ॥
निज चित सोधें मन परबोधें, जीव दोष नहीं दृष्टि।
अपने भाव में बरतें निसदिन, करें दया की वृष्टि ॥
मोह मया और छल चतुराई, छोड़ें मूल विकारा।
पर हित लागी सहज विरागी, ज्ञानबुद्धि भण्डारा ।
दुःख क्लेश सह अपने सिर पर, जीव का करें सुधारा।
भव दुःख भंजन काम निकंदन, जम से दें छुटकारा ॥
धर कपास की गति बिमल चित, निरस विशुद्ध कहावें।
सहें बिपत्ति कठिनाई जग की, और का दोष छिपावें ॥
सरल सुभाव रहें जग माहीं, अपना रूप सँभारें।
औरन के अवगुन नहिं देखें, दया का मरम विचारें ॥
सुख देवें दुःख हरें निरन्तर, क्षमा करें अपराधा।
हँसी खुशी आनन्द परम गति, अगम अलेख अबाधा ॥
नाम फकीर धराया तूने, हो फकीर अब साँचा।
जैसा नाम तो गुन भी वैसा, मन क्रम सहित सुबाचा ॥
है फकीर का नाम पियारा, मैं फकीर का दासा।
तन मन धन फकीर पर वारूँ, बसूं सुसंग सुबासा ॥
कठिन नाम है कठिन काम है, कठिन फकीर कमाई।
जग के भव दुःख नासें पल में, जब फकीर जग आई ॥
जो फकीर मोहिं दरसन देवे, अपना भाग सराहूँ।
अपने तन के चाम की जूती, पग फकीर पहनाऊँ ॥
मैं नहिं राम कृष्ण का सेवक, ईश ब्रह्म नहिं जानूं।

मैं फकीर का नाम दिवाना, सबसे बढ़ कर मानूं ।।
मेरे साध हैं शब्द विवेकी, सन्त वंश कुल शोभा ।
चरन कमल मस्तक पर धारूँ, प्रेम मगन मन छोभा ।।
एक घड़ी साधु की संगत, कटे मोह जम फाँसी ।
मेरी नज़र में साधु फकीरा; सत चित आनन्द रासी ।।
जो फकीर का दरशन पाऊँ, चरन सरोज पखारूँ ।
आप तरूँ उसकी शरनाई, औरों को संग तारूँ ।।
साधु की संगत गुरु की सेवा, सहजहि काम बनावे ।
जिसपर साधु की दृष्टि पड़ गई, फिर जगजोनि न आवे ।।
तरुवर सरबर मेघ का पानी, औरन को सुख कारी ।
तैसे ही सुन मेरे फकीरा, साधु पर उपकारी ।।
तू फकीर बन तू फकीर बन, तू फकीर बन भाई ।
मैं भी तरूँ फकीर चरन लग, ऐ फकीर ! सुखदाई ।।
सुन ले कथा सुनाऊँ तुझको, प्रगटे विमल विवेका ।
जीव अनेक रहें जग अन्दर, पर फकीर कोई एका ।।

राधास्वामी कौन ?

मैं अपने आपको कभी-कभी राधास्वामी दयाल कह देता हूँ । इस पर सम्भव है बहुत से लोग आपत्ति करें या मुझे अहंकारी समझें मगर जहाँ तक मेरे अन्तःकरण की सच्चाई का सम्बन्ध है मैं समझता हूँ कि मैंने झूठ नहीं कहा ।

"राधा आदि सुरत का नाम, स्वामी आदि शब्द पहचान ।"
(रा० स्वा० दयाल)

इस सत्संग में मैंने निज अनुभव के आधार पर सिद्ध किया है और साथ ही स्वामी जी की वाणी का हवाला दिया है कि देह, मन और आत्मा और वस्तु हैं और सुरत और वस्तु है । आकाशतत्त्व तीन प्रकार का है- (1) स्थूल-प्रकृति का आकाशतत्त्व (2) सूक्ष्म-प्रकृति का आकाशतत्त्व

और (3) कारण-प्रकृति का आकाशतत्त्व। आकाश का गुण शब्द है। स्थूल-प्रकृति के आकाशतत्त्व के गुण का जो शब्द है वह ओ३म् है, सूक्ष्म-प्रकृति के आकाशतत्त्व के गुण का जो शब्द है वह सोहंग (आत्मा) है और कारण-प्रकृति के आकाशतत्त्व के गुण का जो शब्द है सतनाम है जिसे आदि बाणी कहते हैं। सुरत का प्राकट्य कारण-प्रकृति के शब्द से होता है। इस असलियत की दृष्टि से, सुरत के लिहाज़ से प्रत्येक व्यक्ति स्वयं राधास्वामी है अर्थात् उसकी आदि सुरत कारण-प्रकृति के शब्द से प्रकट होकर स्थूल प्रकृति तक आकर फिर वापिस लौटकर अपने घर अर्थात् शब्द में लय हो जाती है। इस आधार पर ऊपर से नीचे आने और फिर लौट जाने के अमल (क्रिया) का नाम राधास्वामी मेरी समझ में आया है। यही बात राधास्वामी सार बचन नज्म में नाम-माला के सिलसिले में वर्णन की गई है। मैंने सारा जीवन इसी धुन में बिना किसी निज स्वार्थ के व्यतीत किया है और अपने अनुभव के आधार पर, जिसकी पुष्टि बाणी से होती है, कहता हूँ कि हम सब के सब राधास्वामी हैं। यदि किसी को इस शब्द से चिढ़ है तो वह कोई और नाम रख लें। मैंने असलियत बता दी। शब्दों पर अटकने की आवश्यकता नहीं।

अब सोचो! मुझमें और आप लोगों में कोई अन्तर नहीं है। जो अन्तर समझते हैं वह अज्ञानी हैं। जो मैं हूँ वही आप हैं। इसको निश्चयात्मक कराने के लिए साधन और सत्संग हैं। हम सब सुरत हैं और हमारा आदि स्रोत कारण-प्रकृति का आदि शब्द है। हाँ, 'दयाल' शब्द मैंने अपने साथ जो बढ़ाया है उसके विषय में कहता हूँ कि मैं 'दयाल' हूँ। दयाल उसे कहते हैं जो बिना मुआवज़ा कोई वस्तु दे। आज दिन तक सिवाय खास परमसन्तों के सबने

पन्थ या समाज बनाने की गरज या निजस्वार्थ को दृष्टि में रखा। इसलिए भेद को मसलहतन पर्दे में रखा और रखना जरूरी था क्योंकि एक तो अधिकारी नहीं थे दूसरे स्पष्ट वर्णन से पन्थ नहीं चल सकता था। सम्भव है कोई और भी कारण हो जिसका मुझे पता नहीं है। चूंकि मैंने भारतवर्ष के हित के लिए सच्चाई को निस्स्वार्थ भाव से प्रकट किया है इसलिए मैंने अपने आपको दयाल कहा है और कहता हू कि जो कुछ मैंने अनुभव किया है वह यह है कि हम सब एक चेतन के पृथक्-पृथक् बुलबुले हैं। हमने अपने अज्ञान से अपने आपको गलत समझकर भिन्न-भिन्न दायरे, धर्म, पन्थ और सम्प्रदाय बनाये हुए हैं और आपस में भेद-भाव उत्पन्न किया हुआ है। मेरी वर्णनशैली से मुझे कोई अहंकारी समझ ले मगर वास्तव में मैं अहंकारी किसी सूरत में नहीं हूँ किन्तु असलियत और सच्चाई के रूप में मैं सच कहता हूँ जिसका जी चाहे सुने या न सुने मगर कहे जाता हूँ कि इस राधास्वामी मत या सन्तमत की असली शिक्षा के बिना समझे और इस पर बिना अमल किये मानव जाति का कल्याण न होगा। मान लो कि मैं अहंकारी ही सही मगर उसके बदले में किसी से कोई गरज या मतलब तो नहीं रखता हूँ यदि रखता हूँ तो मुझे स्वयं होश करना चाहिए कि मैं अपनी हानि कर रहा हूँ। लोगों को उपदेश देते-देते स्वयं गड्ढे में गिर रहा हूँ। मेरी समझ में मेरे बजाय वह महात्मा जो बात को पर्दे में रख कर जनसाधारण से गलत तरीके से अपने को उनका मुक्तिदाता मनवा रहे हैं अधिक अपराधी और अहंकारी हैं। मनुष्य का मुक्ति-दाता वास्तव में निजस्वरूप का ज्ञान है और यह ज्ञान किसी पूर्ण पुरुष के सत्संग से मिलेगा। 'आप आप को आप पहचानो। कहा और का नेक न मानो' (रा० स्वा० दयाल)

मैंने भेद को खोल दिया और इस भारतवर्ष के हित

के लिए अपनी बाणी बतौर पन्थ-प्रदर्शक (Guide) के पेश कर रहा हूँ। विवश हूँ। दाता दयाल (महर्षि शिव) का संस्कार है और हज़ूर साँवलेशाह (हज़ूर बाबा सावन सिंह) की आज्ञा है।

तेरा रूप है अद्भुत अचरज, तेरी उत्तम देही।
जग कल्याण जगत् में आया, परम दयाल सनेही॥

यदि कोई आदमी मेरी बात को नहीं समझता तो मैं क्या करूँ। स्वामी जी ने साफ कहा है :—

"वक्त गुरु बिन काज न सरही।"

इसी वास्ते किसी पूर्ण पुरुष से प्रेम और उसके सत्संग करने पर ज़ोर दिया गया है और कहा गया है कि यदि एक महापुरुष के जीवन में साक्षात्कार नहीं हुआ तो उसके पश्चात् दूसरे पूर्ण पुरुष का सत्संग करो। इसीलिए सत्संग पर ज़ोर है। राधास्वामी दयाल की बाणी है :—

राधास्वामी धरा नर रूप जगत में, गुरु होय जीव चिताये।
जिन जिन माना बचन समझ कर, तिन को संग लगाये॥
कर सतसंग सार सार रस पाथा, पी पी तृप्त अघाये।
गुरु संग प्रीति करी उन ऐसी, जस चकोर चन्दाये॥
गुरु बिन कल न पड़त घड़ी एक, दम दम मन अकुलाये।
जब गुरु दर्शन मिलें भाग से, मगन होत जस बछड़ा गाये॥
ऐसी प्रीति लगी जिन गुरुमुख, सो सो गुरु अपनाये।
उन की लगन भोग इन्द्री के; छिन में सब बिसराये॥
गुरु की मूर्रात बसी हिये में; आठ पहर गुरु संग रहाये।
अस गुरु भक्ति करी जिन पूरी, ते ते नाम समाये॥
स्वाति बूंद जस रटत पपीहा, अस धुन नाम लगाये।
नाम प्रताप सुरत अब जागी, तब घट शब्द सुनाये॥
शब्द पाय गुरु शब्द समानी, सुन्न शब्द सत् शब्द मिलाये।
अलख शब्द और अगम शब्द ले, निजपद राधास्वामी आये।
पूरा घर पूरी गति पाई, अब आगे कुछ कहा न जाये॥

यदि खुशी का या आनन्द का जीवन व्यतीत करना है तो अपनी नीयत को शुद्ध रखो। मेरा क्या है मैं निर्धन हूँ। बेसाथी हूँ। हाँ, सच्ची बातें आपको अवश्य कहता रहता हूँ। उन पर चलोगे तो सुख पाओगे वर्ना तुम जानो तुम्हारा काम जाने।

आज का सत्संग केवल इतना है कि अपने भाव को, विचार को और मन को शुद्ध रखो। यदि ऐसा नहीं कर सकते तो इसका उपाय यह है कि ऐसे पुरुष का सत्संग करो जिसका अपना हृदय शुद्ध और पवित्र हो। उसके सत्संग से आपके हृदय के भाव और विचार शुद्ध और पवित्र होते जायेंगे। मलीन हृदय और लालची लोग स्वयं भी डूबते हैं और दूसरों को भी डुबोते हैं। जब देखो उनको दुनिया की हविस की पड़ी रहती है। कभी डेरा बनाने की फिक्र है तो कभी चेला बनाने की और कभी धन संग्रह करने की। झूठ-मूठ साधुओं का भेष धारण कर लिया मगर हृदय को शुद्ध नहीं किया। यह याद रहे कि सन्तमत में बाने (वस्त्रों) की कोई पाबन्दी नहीं है न किसी विशेष ढंग में रहने का बन्धन है।

मैं समझता हूँ कि जो लोग विशेष बाने (वस्त्रों) या विशेष ढंग में रहने के पाबन्द हैं असलियत उनसे कोसों दूर है। इसके अतिरिक्त पाबन्दी बन्धन की हालत का नाम है। जो उच्च अवस्था प्राप्त कर लेते हैं या करना चाहते हैं उनके लिए बन्धन या पाबन्दी कैसी! श्री जार्ज बरनार्डशा एक अंग्रेजी फिलॉसफर के निम्न शब्द मेरे कथन का समर्थन करते हैं। सुनिये :—

"The golden principle is that there are no principles." अर्थात् सुनहरा सिद्धान्त यह है कि कोई सिद्धान्त न रहे।

यह उच्चकोटि का शब्द है मगर प्रत्येक के लिए इस पर चलना उचित नहीं। यह केवल उनके लिए है जो बहुत ऊँचा चढ़ना चाहते हैं।

यह बताया जा चुका है कि संगत का प्रभाव पड़ना अनिवार्य है किन्तु साथ ही यह भी ध्यान रहे कि तुख्म तासीर (बीज का असर) भी दूर नहीं की जा सकती। यह उसी प्रकार है जिस प्रकार कि नीम के पेड़ को शर्बत से सींचने पर भी उसका प्रभाव नहीं मिट सकता। हमारा शरीर बाप के वीर्य्य से बनता है। उसमें बाप के ख्यालात और संस्कारों का आना लाजिमी है। इसी प्रकार हमारी असली उत्पत्ति हमारे आत्मा से है जिससे सुरत का मेल है। आत्मा बीज है अकाल पुरुष, परमतत्त्व या सतपुरुष का। चूंकि बीज का प्रभाव नष्ट नहीं होता अतः वह प्रभाव पिंड देश में आने वाली हमारी सुरत को ऊपर खेंच ही ले जाता है अर्थात् हम सबका आत्मा की ओर और आत्मा से अकाल पुरुष, परमतत्त्व अथवा सतपुरुष की ओर खिंच जाना एक स्वाभाविक और मजबूरी बात है। इससे किसी दिशा में भी बचाव नहीं। हाँ, यह काम अपने समय पर होगा। असंतोष से काम न चलेगा। यह सत्संग का कार्य केवल इसलिए किया जाता है कि जीव बुराई से बचकर अच्छाई की ओर आवें और उनके मन की मलीनता दूर हो ताकि उनको सुरत को अपने स्वरूप की ओर जाने में सुगमता हो। यदि आप यह चाहें कि मन को अपवित्र और अशुद्ध रखते हुए आपकी सुरत अपने निज स्वरूप या परम-तत्त्व की ओर खिची रहे तो यह असम्भव है। इससे अधिक स्पष्ट शब्दों में सच्चाई किस प्रकार वर्णन की जा सकती है स्वयं सोचिये।

आज आपको माया देश के विषय पर सत्संग कराया गया है। सायंकाल के सत्संग में यह बताया जायेगा कि सुरत स्थूल से सूक्ष्म की ओर कैसे आकर्षित होगी अथवा उसको इससे कौन उभारेगा।

परमसन्त हजूर मानव दयाल
डा. आई. सी. शर्मा जी महाराज
हनमकुण्डा (आन्ध्र प्रदेश)

दिनांक 26—1—87

शब्द

जो मेरे प्रीतम का प्यारा; मेरा भी वह प्यारा।
जो सतगुरु का नाम दिवाना, आँखों का है तारा।।
पाप पुण्य का भेद न परखूं, ऊँच नीच नहिं जानूं।
बुरा भला नहिं दृष्टि में मेरे, भाव का नाता मानूं।।
मेरा स्वामी पतित उद्धारन, पतित हेतु जग आया।
पतित को अपने चरन लगाया, पतित सुधार कराया।।
पतित से पतित जो भाव भेंट ले, सतगुरु पद को परसे।
मैं उस भाव के सदके जाऊँ, प्रेम प्रसाद को तरसे।।
धोबी घाट है गुरु सतसंगत, मैले कपड़े आवें।
साबुन गुरु के प्रेम का पाकर, सो उजले बन जावें।।
उजले धोबी घर नहिं आवें, उनको क्यों कोइ लावे।
धोबी मैल को धोये निसदिन, मैले शुद्ध बनावे।।

डाकू चोर उचक्का क्रोधी, कामी लोभी मानी ।
परमारथ हित गुरु ढिग आवें, उपजे न मुझे ग्लानी ।।
मैं नाहिं पूछूं तू है कैसा, कैसी करे कमाई ।
फूल प्रसाद कहाँ से लाकर, गुरु के भेंट चढ़ाई ।।
गुरु जब प्रेम भाव के भूखे, प्रेम है मुझको प्यारा ।
जो मेरे प्रीतम का प्यारा, सो आँखों का तारा ।।
गणिका रामानन्द चरन लग, भक्ति भेंट जब लाई ।
मिला प्रसाद कबीर को उसका; प्रेम स्वाद लग खाई ।।
तर गई गणिका तर गये पीपा, तरे चमार रैदासा ।
उनके चरन कबीर के सिर पर, गुरु के प्यारे दासा ।।
कोढ़ी तर गये तरे पातकी, गुरु के चरनन लागी ।
ऐसे पापी मुझे पियारे, भक्ति प्रीति हिय जागी ।।
मैं हूँ पापी पाप की मूरत, पाप की दृष्टि धारी ।
पापी संग तरा मैं गुरुबल, पापी की बलिहारी ।।
भाव कुभाव सुभाव न परखूं, नहीं द्वेष नहीं रागा ।
मेरा तो वह सदा सनेही, जो गुरु चरनन लागा ।।
निज स्वारथ वश भूल करूं मैं, हिंसा पाप कमाई ।
हिंसक जब गुरु के ढिग आवे, प्यारा मुझको भाई ।।
पापी तारन आये सतगुरु, शब्द जहाज बनाया ।
मैं पापी पापी संग तर गया, पापी पर गुरु दाया ।।
जात न पूछूं पाँत न पूछूं, नाहीं कुल परिवारा ।
प्रेम प्यार का नाता मानूं, प्रेम का सकल पसारा ।।
सुन फकीर यह भेद अनूपा, अचरज अगम अमाना ।
जिस पर दयादृष्टि सतगुरु की, तेहि बड़भागी जाना ।।
मैं मर जाऊँ भीख न माँगूं, अपने तन के काजा ।
परस्वारथ के काम में प्यारे, मोहिं न आवे लाजा ।।
कैसा पाप पुण्य है कैसा, नाम से लगन जो लागी ।
पूले लाख घास के जर गये, एक चिनगी थी आगी ।।

नाम गुरु का आग तुल्य है, पाप लाख मन पूला।
रत्ती नाम जरावे सबको, दया मेहर अनुकूला ।।
कुत्ते बिल्ली रहें परस्पर, वैर भाव सब छोड़ें।
निज मालिक के प्रेम को परखें, प्यार का नाता जोड़ें ।।
तैसे ही मुझको पापी प्यारे, गुरु को शरण जो आये।
प्यार करूँ नाहीं उनको कैसे, गुरु जब चरण लगाये ।।
साधन प्रेम का सुगम सुहावन, भक्ति भाव सुखदाई।
पापी भक्ति के अधिकारी, समझ में मेरी आई ।।
राधास्वामी नाम भजो नित, नाम से लव रहे लागी।
जो कोई नाम से राखे प्रीती, सो मेरा अनुरागी ।।

नन्दितानि दिगन्तानि यस्यानन्दाम्बुबिन्दुना ।
पूर्णानन्दं प्रभुं वन्दे स्वानन्दैक्यस्वरूपिणम् ।।
परमतत्त्वस्य अवतारं, परमपूज्यं सत्संगिनाम् ।
मानवस्य परम् इष्टं, फकीरं वन्दे जगद्गुरुम् ।।

राधास्वामी !

मेरी अपनी ही आत्मा के साक्षात् स्वरूप, परमतत्त्व के अंश; भाइयो, बहनो और बच्चो, हर व्यक्ति के मन में कभी-कभी यह सवाल उठता है कि यह विषमतापूर्ण जगत् जहाँ दुःख भी है और सुख भी है, जहाँ निन्दा भी है और स्तुति भी है, जहाँ राग भी है और द्वेष भी है, जहाँ सर्दी भी है और गर्मी भी, और इन विषमताओं के होते हुए हमें अनुभव करना पड़ता है कि उस मालिक को क्या पड़ी थी जो जीवों के लिए यह अलझंजा उसने बना दिया, और हर एक जीव को इसमें फँसा दिया आखिर क्या मक़सद है इस सृष्टि का ? यह सवाल हर एक के मन में कभी न कभी उठता है। और हम कह रहे हैं :—

नन्दितानि दिगन्तानि यस्यानन्दाम्बुबिन्दुना ।
पूर्णानन्दं प्रभुं वन्दे स्वानन्दैक्यस्वरूपिणम् ।।

वह मालिक जिसे आप कोसते हो, गालियाँ देते हो, (गालियाँ देने वाला भी तर जाता है) वह मालिक अपने निज स्वरूप में न निन्दा है, न स्तुति है, न दुःख है, न सुख है। वह तो परमानन्दमय है; पूर्णानन्द है। जिसकी एक बिन्दुमात्र से, जिस आनन्दसागर की एक बिन्दुमात्र से 'निन्दितानि दिगन्तानि' जगत् की सभी दिशाएँ आनन्दमय हो रही हैं, जिसे देखते-देखते आप चकित हो रहे हैं, जिसकी निरन्तर खोज करते हुए बड़े-बड़े वैज्ञानिक, दार्शनिक, ऋषि, मुनि आखिर में कह उठे—"नेति ! नेति !! नेति !!! उसके इस जगत् में दसों दिशाओं के अन्दर उसकी एक ही बिन्दु-मात्र से सब तरफ आनन्द ही आनन्दमय हो रहा है, उस पूर्णानन्द स्वरूप मालिक, उस स्वामी, उस प्रभु, उस सतगुरु को नमस्कार करता हूँ, जो अपने निज स्वभाव के अन्दर, एक रस के अन्दर, सदा आनन्दमय है। और इधर क्या हो हो रहा है ? किसी सज्जन ने मुझसे कहा कि आजकल पंजाब के अन्दर जो जनसंहार हो रहा है, वह क्यों ? मैने भी उनसे प्रश्न किया कि पंजाब ही क्यों सारे विश्व में जनसंहार हो रहा है; एशिया और योरुप के मध्यपूर्व में क्या हो रहा है ? धर्म के नाम पर इतना अत्याचार हो रहा है ! ईसाई-मुसलमान लड़ रहे हैं। मुसलमान-यहूदी लड़ रहे हैं। हजारों मारे जा रहे हैं। उस धर्म के नाम पर लोग बम्ब से मारे जा रहे हैं और सब धर्म के नाम पर जिसको सभी मानते हैं और मानते हैं कि सभी धर्मों का आधार एक ही मालिक है। कितना ढोंग, कितनी नासमझी है, कितनी मूर्खता है। आखिर यह सब क्यों हो रहा है ? यह इसलिए हो रहा है कि एक तो लोग मालिक के स्वरूप को समझे नहीं और फिर यह इस जगत् के प्रपञ्च के अन्दर सब आ गये। क्यों आये ? यह एक सवाल है। इसका जवाब मैं आपको देता हूँ—कि वह मालिक पूर्णानन्द

परमानन्दमय है जिसके हम अंश है, जिसके आनन्द सागर में हम रहते थे, उस मालिक ने यह द्वंद्वात्मक जगत् बना दिया—भूः, भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः, सत्यम्—अनेक लोक बना दिये। वह सर्वाधार मालिक अपने आप में परिपूर्ण है। उससे धारा निकली। उस धारा ने पहले शब्द का मण्डल रचाया और आदिशब्द प्रकट हुआ। उस आदिशब्द से प्रकाश के मण्डल की रचना हुई। उस प्रकाश से फिर शब्द की धार निकली। इस शब्द और प्रकाश की धारा ने मिलकर अनेक मण्डलों की रचना की—'अखण्डमण्डलाकारम् व्याप्तम् येन चराचरम्।' वह जो अखंडमंडलाकारमय चराचर जगत् में व्याप्त परमतत्त्व मालिक है, जिसकी सत्ता सब में व्याप्त है, वह मालिक आपके अन्दर भी मौजूद है। उसके आदिशब्द से आपकी सुरत प्रकाश में आती है और वही नीचे के मण्डल बनाती चली जाती है। पहले उसने आकाश का मण्डल बनाया। फिर उसके नीचे वायु का मण्डल हृदय चक्र है। उससे नीचे उतर कर शब्द और प्रकाश ने नाभि कमल का मण्डल बनाया जो कि विष्णु का केन्द्र है जो अग्नि तत्त्व है। फिर उसके नीचे स्वाधिष्ठान चक्र की रचना हुई जो ब्रह्मा का मण्डल और जल तत्त्व का केन्द्र है। उससे नीचे उतर कर पृथ्वी तत्त्व का केन्द्र गुदा चक्र की रचना की; जो गणेश का मण्डल है। यह मूलाधार चक्र हमारे अन्दर का पृथ्वी तत्त्व है। यही पृथ्वी और जल तत्त्व बाहर की रचना में भी मौजूद है। उसके ऊपर वायु-मण्डल है; फिर सूर्य है जो अग्नि का केन्द्र है। उसके ऊपर आकाशगंगा है और आकाशमण्डल है। उसके बाद आद्या शक्ति का आकाशमण्डल है। उसके ऊपर सोहं पुरुष का सोहं देश है। यह सारी रचना हुई और हम सब से ऊपर परमानन्द की अवस्था में बैठे हुए थे। जब यह सारे मण्डलों की रचना हो गई तो इनका अनुभव करने के लिए मालिक

की प्रेरणा हुई कि मैं अपने अंशों को वहां भेजूं। मालिक की प्रेरणा से, या हम स्वयं इस जगत् में आये। किस लिये आये? उस मालिक ने अपने अंशों को अपने से अलग दूर फेंका ताकि उसे इस बात का अनुभव हो कि अपने प्रियतम से बिछुड़कर दूर जाने में कितना कष्ट, कितनी पीड़ा होती है और तब उसके अन्दर अपने प्रियतम से मिलने के लिए सच्ची तड़प, सच्चा प्रेम पैदा होता है। तो यह जगत् बना ही प्रेम का अनुभव करने के लिए। इसलिए इस जगत् को हम आनन्दमय कहते हैं कि इसके अन्दर वही अनन्त सत्ता, वही परमानन्द पूर्णानन्द की सत्ता, जो अनन्त चैतन्य है, जो इस जड़ जगत् के अन्दर सो रहा है, जो वनस्पति जगत् में स्वप्न ले रहा है, जो पशु जगत् में चेतन हो रहा है, वही मनुष्य में आत्म चेतन होकर व्यापा है; और वही सन्त के अन्दर परम चेतन हो जाता है :—

'सब में व्याप्त तुम्हारी सत्ता'

वह परमतत्त्वाधार हमें अपने से दूर फेंक देता है ताकि हम प्रेम का अनुभव कर सकें; ताकि हम समझ सकें कि प्रियतम के साथ रहने में कितना आनन्द परम सुख था। कुछ लोग कहते हैं कि यह उसकी लीला है। पर यह कैसी लीला जो यह जगत् का अलखंजा रचा कर सबको दुःख में डाल दिया? नहीं-नहीं, यह जगत् प्रेममय है, प्रेम के लिए है, और प्रेम का अनुभव करने के लिए है। बिना प्रेम किये हम उस मालिक के रूप को समझ नहीं सकते, न उसको पा सकते हैं। जैसे आपके घर में कोई बूढ़ा भी होता है, जो कुछ नहीं कर सकता, केवल चारपाई पर पड़ा खाँसता रहता है कुछ लोग कहते हैं कि यह मरता भी नहीं लेकिन वही निकम्मा बूढ़ा जब नहीं रहता, मर जाता है, तब सब अनुभव करते हैं कि उनके रहने ही से घर में एक बड़ा भारी सहारा था।

उनका खांसना भी भला लगता था। किसी चीज़ की सच्ची कदर तब होती है जब वह नहीं रहता। उसके अन्दर आत्मा है। और हम किसी को प्यार इसलिए करते हैं कि उसके अन्दर आत्मतत्त्व है। दर-असल हम आत्मा से ही प्यार करते हैं और आत्मा के कारण ही प्यार करते हैं। शरीर से प्यार नहीं करते। प्यार होता ही आत्मा से है और आत्मा के लिए है। लोग ग़लत समझते हैं कि शरीर से प्यार होता है। मालिक ने हमें प्यार के लिए ही अपने से दूर फेंका; और जितनी ही दूर फेंकता है, हम उतना ही अधिक प्यार से और तेज़ी के साथ उससे जा मिलते हैं। हम उसी पूर्णानन्द सागर के अंश हैं जिसमें अनन्त सत्ता है, अनन्त जीवन है, अनन्त चेतना है और अनन्त आनन्द। उससे हमको प्रेम है। और हम अन्तस् से प्रेरित हो रहे हैं और उसके विरह को महसूस कर रहे हैं। जिसमें विरह नहीं है वह मालिक से नहीं मिल सकता। लेकिन इसमें दो बातें हैं। एक तरफ तो हम जानते हैं, हमारे अन्तस् में यह सहज प्रेरणा है कि हम अमर हैं, हमारा अचेतन मन यह पूरी तरह जानता है कि हम मरते नहीं हैं। एक दृष्टि से हमारा शरीर भी अमर है। हमारी सत्ता (अस्तित्व), हमारी चेतना (मन) और हमारी आत्मा (आनन्द) यह ब्रह्माण्ड में हर जगह व्याप्त है। जड़ से जड़ वस्तु में भी उसकी सत्ता व्याप्त है। जिस पदार्थ को आप जड़ समझते हो उसको टुकड़े-टुकड़े करो। उसके अणु-परमाणु अलग कर दो। अब आप उस परमाणु को जड़ कहो तो वह जड नहीं है। हर परमाणु के अन्दर एक केन्द्र है जिसके चारों तरफ इलेक्ट्रॉन. प्रोटॉन, न्यूट्रॉन बड़ी तेज़ी से घूम रहे हैं। उनके अलावा एक चौथे पद की चीज़ भी उसमें है, जिसका पता विज्ञान की आधुनिक खोज द्वारा हुआ है, उसे ग्लूटॉन कहते हैं। यह ग्लूटॉन ही वह प्रेम तत्त्व है जो शेष तीन तत्त्वों को मिलाने और जोड़ने

वाला है सारा जगत् प्रेम ही है। मालिक की सारी शक्तियाँ प्रेममय हैं और सारा जगत् प्रेम पर ही आधारित और प्रेम के लिए ही है। मालिक स्वयं प्रेम स्वरूप है। आपका शरीर है, उसमें आपकी इन्द्रियाँ अलग-अलग हैं किन्तु सब के ऊपर एक मन है जो सब को प्रेम से जोड़े रखता है। ऐसे ही परमाणु के अन्दर भी इलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन, न्यूट्रॉन अलग-अलग हैं पर इनका एक केन्द्र है जो सब को एक साथ जोड़े रखती है। उस केन्द्र के पीछे जो शक्ति है, वह प्रेम की ही शक्ति है। संसार में जो भावात्मक (Negative) और अभावात्मक (Positive) शक्तियाँ हैं, और जो हिंसात्मक विरोधो तथा अनुरागात्मक प्रवृत्तियाँ हैं, ये सब की सब प्रेम पर ही आधारित हैं। ईर्ष्या भी प्रेम के लिए ही होती है। प्रेम के बिना कोई अस्तित्व में रह ही नहीं सकता। आप किसी से प्रेम करते हो तो आपकी जितनी ही अधिक निन्दा की जायेगी, उतना ही आपका प्रेम बढ़ता जायेगा :-

'कबीर निन्दक न मरे, जीवे आदि जुगाद।
हम तो स गुरु पाइया, निन्दक के परसाद ।।'

इस जगत् में कोई भी व्यक्ति ऐसा नहीं जो बिलकुल निकम्मा, बेकार या गिरा हुआ हो। जो पूरी तरह नीचे गिर जायेगा, वह ही ऊपर उठेगा। हर एक धर्माचार्य यही दावा करता है कि वह आपको मालिक से मिला देगा। यह सारा झगड़ा जो मालिक और धर्म के नाम पर संसार में चल रहा है, यह सब है क्या ? पहले तो यह ही नहीं मालूम कि हम जगत् में आये किस लिये, मालिक है क्या, और हम उसे कैसे मिल सकते हैं ? मालिक विशुद्ध प्रेम स्वरूप है, अपने प्रेम की शक्ति से ही उसने जगत् बनाया और प्रेम करने के लिए ही बनाया। और अगर हम उस प्यारे प्रियतम को मिलना चाहते हैं तो केवल प्रेम के ही द्वारा

उससे मिल सकते हैं। हमारे अन्दर जितनी इन्द्रियाँ, प्रवृत्तियाँ और शक्तियाँ हैं, उन सब से और पूर्ण रूप से जब हम उस मालिक को समर्पित होकर प्रेम करेंगे तो वह तुरत ही हमें मिल जायेगा। इसके विरुद्ध जब हम अहंकार में आकर इस जगत् के स्वार्थ को सामने रखते हैं, तब हम उस मालिक के विरुद्ध काम करते हैं। कोई भी धर्म, विशेषकर सिख धर्म जो पूरी तरह सन्तमत है, लोग कहते हैं कि एक धर्म दूसरे से नफरत करता है। जो कहता है वह अपने धर्म पर ही नहीं चल रहा है। सिख धर्म के संस्थापक ने यह कहा :—

'अव्वल अल्ला नूर बनाया, सभी नूर दे बन्दे।
उसी नूर से सब जग उपजा, क्या चंगे क्या मन्दे।'

यह गुरु नानक साहिब की वाणी है। मालिक से सबसे पहले प्रकाश निकला ; प्रकाश से ही सब निकले, सभी जीव हुए ; सभी तो प्रकाश ही हैं। फिर कौन गन्दा, कौन बुरा और कौन भला ? यह सब निस्बती है और गुरु नानक के अनुयायी गुरु नानक के कथन पर चल नहीं रहे हैं। तो यह दोष धर्म का नहीं, बल्कि धर्म को जो फिरका मानकर धर्म के विरुद्ध चल रहे हैं, भोलीभाली जनता को लड़ा कर तबाह कर रहे हैं, उनका दोष है। यह दोष धर्म का नहीं है। सिख (शिष्य) धर्म का दोष नहीं है। बल्कि सिख धर्म में जितनी व्यापकता है, यदि उसके अनुसार चलें, उनका पहला मन्त्र जो है :—

'एक ओंकार, सतगुरु प्रसाद, कर्तापुरुष
निर्भय, निरभव, निरहंकार।'

इसमें सच्चाई को बताया है। इतना ही नहीं बल्कि जिन दस गुरुओं ने सच्चाई पर चलकर सनातन धर्म की रक्षा के लिए अपने प्राण भी त्याग दिये, अपने पुत्रों को

ज़िन्दा दीवार में चुनवा दिया, आज उनके अनुयायी कहते हैं कि हिन्दुओं को मार डालो। इसका कारण धर्म नहीं, बल्कि इसका कारण राजतीति है। राजनीति में एक बड़ी भारी भूल जो हमारे देश ने की है वह यह कि हमने भारत को धर्म निरपेक्ष कहा। लेकिन धर्म निरपेक्ष का मतलब धर्मविहीन नहीं है। धर्म निरपेक्ष राज्य अमेरिका भी है। वहाँ ईसाई हैं, यहूदी हैं, मुसलमान हैं, हिन्दु हैं। धर्म निरपेक्षता का मतलब आपके लिए धार्मिक स्वतन्त्रता है। लेकिन राज्य के मामले में धर्म कोई दखल नहीं दे सकता। आप चाहें कि किसी खास धर्म के व्यक्ति को मिनिस्टर बना दें, यह ग़लत बात है। धर्म निरपेक्ष का मतलब हर एक व्यक्ति को धार्मिक आज़ादी है, लेकिन धर्म के नाम पर राजनीति नहीं कर सकते। यह हमारे नेताओं की भूल है। उनकी मूर्खता है जो वे कहते हैं कि धर्म के नाम पर इनको राज्य दे दो। वास्तव में सिख धर्म सनातन धर्म पर आधारित है। लेकिन एक तो आज जो धर्म के ठेकेदार हैं उन्होंने सच्चाई को छिपा रखा है। दूसरी बात यह है कि जो अपने को धर्म का ज्ञाता समझने वाले हैं वे इस बात को भूल गये कि उस मालिक का स्वरूप क्या है। वास्तव में उस मालिक का तो न कोई रूप है, न रंग है। वह एक परमतत्त्व है जो अपने आप में परिपूर्ण है। जितने रंग-रूप हैं वे हमारे अपने विश्वास के कारण हैं। गीता में भी यही कहा है :—

'ये यथा मां प्रपद्यंन्ते, तांस्तथैव भजाम्यहम्।'

मालिक का कोई वास्तविक रूप-रंग अगर है तो वह मनुष्य है। और मालिक मनुष्य के रूप में प्रकट होकर ही दुःखी जीवों का उद्धार करता है। मनुष्य रूप से प्रेम करने के लिए ही मालिक ने जगत् बनाया है और प्रेम करने से ही वह निजधाम को पहुँच सकता है। हमें पूर्ण प्रेम का

अनुभव कराने के लिए ही मालिक स्वयं मनुष्य के रूप में आता है। मनुष्य रूप में आना एक दृष्टि से आप पाप के कारण मानते हो। पापी वह है जिसके अन्दर कोई कमी है। अपने आप में पाप कोई चीज़ नहीं है। पाप क्या है? अपने अन्दर कमी महसूस करना पाप है अपने आपको बुरा मानना ही पाप है। इसके अलावा और कोई पाप नहीं। मैंने चालीस साल नैतिक शास्त्र पढ़ाया। उसमें यही देखा कि नैतिकता क्या है और अनैतिकता क्या है; शुभ क्या है, अशुभ क्या है? कौन से कर्म नैतिक हैं, और कौन से कर्म अनैतिक हैं? मैं इस नतीजे पर पहुँचा कि जिस कर्म के द्वारा हम जानबूझ कर अपनी ओर से किसी को कष्ट दे रहे हैं, या हानि पहुँचा रहे हैं उस कर्म को ही अनैतिक और पाप समझना चाहिए। अब मैं पूछता हूँ— क्या दाढ़ी रखना, या न रखना, पाप है या पुण्य? क्या शराब पीना पाप है? शराब पीना अपने आप में पाप या पुण्य नहीं है, लेकिन जब शराब पीने से आप किसी को कष्ट पहुँचा रहे हैं, चोरी करके शराब पी रहे हैं, या शराब पीकर पत्नी को मार-पीट रहे हैं, तब वह पाप हो गया। क्योंकि आप इससे किसी को हानि पहुँचा रहे हैं, क्षति पहुँचा रहे हैं। इसी दृष्टि से तो तुलसी दास ने कहा है :—

'परहित सरिस धर्म नहिं भाई।
पर पीड़ा सम नहिं अधमाई॥'

सिगरेट पीना अपने आप में पाप है या पुण्य है? सिगरेट पीने से कैंसर ज़रूर हो जायेगा, लेकिन कौन मानता है? डाक्टर जानते हैं कि सिगरेट पीने से कैंसर होता है, पर डाक्टर खुद सिगरेट पीते हैं। हर एक आदमी सिगरेट पीता है लेकिन वह सोचता है कि दूसरों को कैंसर होगा, उसे नहीं होगा। सिगरेट पीने से कैंसर ज़रूर होता है, यह तो निश्चित है। लेकिन सिगरेट पीना अपने आप में न पाप

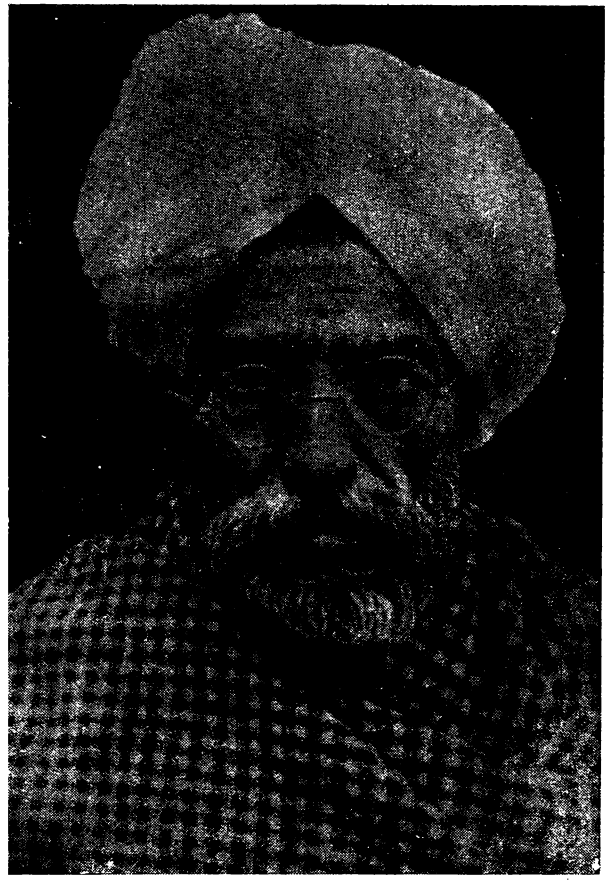

H. H. Param Sant Param Dayal
Pt. Faqir Chand ji Maharaj in young age.

L. to R. : H. H. Hazur Manav Dayal Dr. I. C. Sharma ji Maharaj with the Chief Minister Sh. N. T. Rama Rao (A.P.) and Smt. Kumud Ben Joshi Governor of (A.P.) at the Diamond Jubilee Session of Indian Philosophical Congress, Hyderabad University 1985.

है, न पुण्य । हाँ, अगर वह पिता के पैसे चुरा कर सिगरेट पीता है, जैसे गाँधी जी ने किया था, तो वह ज़रूर पाप है क्योंकि वह दूसरे को हानि पहुँचाता है। कोई काम अपने आप में पुण्य या पाप नहीं। मैं यह समझता हूँ कि किसी को पापी ठहरा देना और उसे अधम मान लेना ग़लत बात है। हिंसक भी अगर मालिक के दरबार में प्यार से आता है तो हिंसक भी तर जाता है। मैं आपको अपना अनुभव बता रहा हूँ। राजस्थान में एक गाँव है चोटून; जोधपुर के पास बाड़मेर इलाके में, वहाँ बलवन्त सिंह नाम का एक ठाकुर है। तो जब 1947 में भारत का विभाजन हुआ तो उसने देखा कि सरहद पर मेंहदी हसन नाम का एक मुसलमान था, वह पाकिस्तान की तरफ के मुसलमानों से मिलकर भारत की तरफ के मवेशियों की चोरी करवाता था। बलवन्त सिंह ने जब यह देखा तो उसको बड़ा गुस्सा आया कि यह तो बदमाशी करता है। लेकिन मेंहदी कांग्रेसी था। उसने भारत की तरफ जब कई कत्ल करवा दिये तो बलवन्त सिंह को उस पर बड़ा गुस्सा आया। उसने दिन-दिहाड़े मेंहदी को गुजरात में ले जाकर उसके पुत्र के सामने ही कत्ल कर दिया। अब कातिल से बढ़ कर तो कोई पापी नहीं हो सकता। मैं जोधपुर में पढ़ाता था और बलवन्त सिंह का भतीजा बन्ने सिंह मेरे पास पढ़ता था, लेकिन मुझे यह मालूम नहीं था कि यह उसका भतीजा है। वह बड़ा अच्छा विद्यार्थी था पर ग़रीब था। इसलिए मैंने उसे अपने यहाँ जगह दे दी थी और वह मुझसे पढ़ता भी था। तो एक दिन मैंने देखा कि वह रामायण खोलकर श्रीरामचन्द्र प्रश्नशलाका में बार-बार उत्तर देख रहा है। मैंने पूछा, "बन्ने सिंह, क्या बात है ?" वह बोला, "गुरु जी मुझे बड़ा दुःख है" मैंने पूछा "क्य बात है ?"तब उसने बताया, "बलवन्त सिंह मेरे ताऊ हैं। मेरे पिता नहीं रहे। ताऊ जी ही मुझ पैसे देते हैं ;

मुझे वकालत पढ़ना है लेकिन मेरे ताऊ जी के साथ बड़ा अत्याचार हुआ है।" मैंने पूछा, "क्या अत्याचार हुआ है ?" वह बोला; "गुरु जी, मेरे ताऊ जी ने जो कत्ल किया है वह एक महा अत्याचारी को सज़ा देने के लिए किया है। ताऊ जी स्वभाव के बड़े अच्छे आदमी हैं। अब जब मुकद्दमा सेशन जज के पास गया तो इस कत्ल का कोई सबूत नहीं था। और सेशन जज ने उन्हें बरी कद दिया। लेकिन मुसलमान कांग्रेसी नेताओं के पास गये और उन्होंथे राजनीति करके मेरे ताऊ जी को फिर बन्द कर दिया। और उन्होंने हाई-कोर्ट के एक कांग्रेसी जज के सुपुर्द कर दिया। उस जज को कोई सबूत तो इनके खिलाफ नहीं मिला लेकिन कोई बहाना लेकर उसने ताऊ जी को उम्र-कैद की सज़ा दे दी।" मैंने बन्ने सिंह से जजमेंट की नकल माँगी। जब वह जजमेंट मेरे पास लाया तो उसमें बात क्या थी कि उसमें जो प्रासीक्यूटर था उसने मेंहदी के लड़के से यह पूछा था कि, "तुमने कत्ल की रिपोर्ट कब की ?" उसने जवाब दिया "मैंने कत्ल होने के अड़तालीस घण्टे बाद रिपोर्ट की थी।" जब उससे पूछा गया "तुमने इतनी देर क्यों लगाई ?" उसने कहा, "मैं सो रहा था।" पूछा गया, "गहरी नींद सो रहा था ?" उसने कहा, "हाँ, गहरी नींद सो रहा था।" और दूसरी बात यह थी कि जो उसका ब्लड टेस्ट (खून की जाँच की रिपोर्ट) था, वह चौबीस दिन के बाद टेस्ट हुआ था। मैंने उसको कहा—"भई ऐसा करो कि तुम इस केस की अपील कर दो।" उसने जा कर श्री गोपाल प्रसाद पाठक को वकील किया और दोनों बातें उन्हें बताईं। जब श्री पाठक ने जज के सामने दोनों बातें रखीं तो जज ने कहा कि दोनों बातें ग़लत और मनोविज्ञान के विरुद्ध हैं। जिसके पिता का कत्ल हुआ हो, भला उसे गहरी नींद आ सकती है ? दूसरी बात

यह कि ब्लड टेस्ट चौबीस दिन बाद हुआ। क्या वह खून आदमी का था या बकरी का ? इन्हीं दो प्वाइंट पर वह सुप्रीम कोर्ट से केस जीत गया। लेकिन अब उसने बताया कि मुसलमान लोगों ने कांग्रेसी चीफ मिनिस्टर सुखाड़िया के पास जा कर फिर दबाव दिया है और सुखाड़िया राजनीति में मेरे ताऊ को नज़रबन्द कर रहा है। मैंने कहा, "कोई बात नहीं तुम चिन्ता न करो।" कुछ दिनों बाद मैं तो एक दम भूल गया था, पर एक दिन जब मैं अपने बरामदे में बैठा था, अचानक एक जोप आकर खड़ी हो गई और उसमें से एक गठीले बदन वाला, गोरे रंग का खूबसूरत जवान कंठियाँ पहने हुए उतर कर मेरे पास आया और मेरे पाँव पड गया। मैंने तो उसे पहचाना नहीं, पर उसके साथ बन्ने सिंह था। बोला, "गुरु जी यह मेरे ताऊ जी हैं। आपने बड़ी दया की जो इनको बचा लिया "मैंने देखा बलवन्त सिंह बहुत शिष्ट और भला आदमी था। उसने मुझे कहा कि "आप ने मुझे बचाया है ; अब मैं आप से वादा करता हूँ कि अगर मुझे नज़रबन्द न किया गया तो जीवन में मेरे द्वारा अब कोई अपराध नहीं होगा। अब मैं शान्ति का जीवन बिताऊगा और सरहद की रक्षा करूंगा। और अगर कांग्रेस मेरे इलाके में पत्थर को चुनाव में खड़ा करे तो मैं जितवा दूंगा।" मैं सीधा सुखाड़िया के यहाँ चला गया। मुझ पर उनका कोई एहसान तो था नहीं, बल्कि मेरे ही एहसान थे उनके ऊपर जो मैंने उनके साथ किये हुए थे। मैंने उनसे कहा, "सुखाड़िया जी, यह बलवन्त सिंह है, आपके सामने खड़ा है।" उसे देख कर वो डर गये। मैंने कहा, "डरो मत। यह बहुत अच्छा आदमी है। बस अब आप इन्हें नज़रबन्द मत करना। सुखाड़िया ने उसे नज़रबन्द न करने का वादा किया और उस दिन से बलवन्त सिंह ने

एक अत्यन्त चरित्रवान व्यक्ति की मिसाल कायम की। अब आप ही बताइये, जिसे आप बुरा कहते हैं, कातिल समझते हैं, वह इतना अच्छा है। फिर मैं कैसे मानूं कि कोई बुरा है। मैं सच्चाई के आधार पर एक दृष्टिकोण आपको दे रहा हूँ। इसीलिए आज खास तौर पर यह शब्द पढ़ा गया है। मैं आपको बताऊँ कि जिन्हें हिंसक कहा जाता है, अगर उनका मनो-विश्लेषण किया जाये तो कोई न कोई बड़ा कारण उनके उस कर्म के पीछे मिलेगा। और मुख्य कारण है राजनीति और कुछ नहीं। बुरा से बुरा आदमी भी भला बन सकता है अगर उसके साथ प्रेम का व्यवहार किया जाये। खास तौर पर सन्तमत में यही सच्चाई बताई गई है कि वह मालिक सर्वाधार जो है वह लाभ-हानि, सुख-दुःख, जय-पराजय, पाप-पुण्य सबसे परे है। हम सब वहीं से आये हैं और हम सब को वहीं जाना है और प्रेम के रास्ते से जाना है। जो शब्द आज पढ़ा गया है यह दाता दयाल जी महाराज ने परम दयाल जी महाराज को सम्बोधित करके लिखा है जिसमें यह प्रमाणित किया गया है कि हर एक आदमी अन्तस् में अपने आप में परिपूर्ण है, पूर्णानन्दमय है और प्रेममय है। अगर उसको इस बात का आभास हो जाता है तो जिसको तुम पाप कहते हो वो पाप पाप नहीं रह जाता। क्या पाप है और क्या पुण्य है? अपूर्णता का नाम पाप है। और जिसने अपनी अपूर्णता को महसूस कर लिया वह इस रास्ते पर आता है और अपनी अपूर्णता को मिटाने के लिए सतगुरु के सत्संग में आता है और सतगुरु के प्रेम को पा करके पूर्ण हो जाता है। जिसे आप नीच समझते हैं वह परमतत्त्व है। कई हज़ार वर्ष पहले की बात है, राजस्थान में रत्नाकर नाम का एक डाकू था। उसको अपनी जीविका चलाने और परिवार पालन का

कोई ज़रिया नहीं था इसलिए वह अपने इलाके में लोगों को लूटने-मारने का काम करता था। जो भी उस रास्ते से गुज़रता उसे लूट लेता, बल्कि कभी कत्ल भी कर देता और अपने परिवार का पालन-पोषण करता। अत्यन्त कुख्यात डाकू था। उस पर देव ऋषि नारद की नज़र पड़ गई। नारद ऋषि ने सोचा कि इसको हमें ऊपर उठाना है। नारद अपनी वीणा बजाते हुए उधर से गुज़रे। रत्नाकर डाकू पेड़ पर बैठा था। उनके ऊपर कूद पड़ा और पकड़ लिया। बोला, जो कुछ है तेरे पास निकाल जल्दी वरना गला घोंट दूंगा।" नारद बोले, "कौन है तू? और करता क्या है?" वह बोला, "तुमको पता नहीं कि मैं रत्नाकर डाकू हूँ! जो कुछ तेरे पास है निकाल जल्दी, नहीं तो तुझे मार डालूंगा।" नारद ने कहा, "भाई, तू मुझे मार नहीं सकता। मुझे कोई नहीं मार सकता। मुझे तू यह बता कि यह धन्धा तू क्यों करता है?" रत्नाकर सोचने लगा कि यह छोटे से क़द का आदमी, इतनी निर्भीकता से बातें कर रहा है। बात क्या है! यह कोई असाधारण व्यक्ति मालूम होता है। बोला, "महाराज, बात यह है कि मेरा कोई और धन्धा नहीं। मैं अपने परिवार का गुज़ारा करने के लिए यह धन्धा करता हूँ।" नारद बोले, "भाई, तुम एक काम करो, कि अपने घर जा कर अपने माता-पिता और पत्नी से यह पूछ कर आओ कि यह जो कुकर्म तुम करते हो, इसका फल भोगने में कुछ हिस्सा वे भी लेंगे या नहीं!" रत्नाकर बोला, "अच्छा, मैं तो पूछने जाता हूँ लेकिन तुम भागोगे तो नहीं? यहीं बैठे रहो।" नारद को बिठा कर वह अपने घर गया। उसे खाली हाथ लौटा देखकर माता-पिता ने पूछा "बेटे, हम भूखे बैठे हैं, तुम खाली हाथ क्यों लौटे? क्या कोई शिकार आज नहीं मिला?" वह बोला, शिकार तो

मिला, उसे मैं पेड़ के नीचे बिठाकर आया हूँ ; लेकिन आप मेरे एक प्रश्न का जवाब दो। क्या मैं जो यह कुकर्म करता हूँ उसका फल भोगने में आप भी कुछ हिस्सा लोगे या नहीं ?" माता-पिता बोले, "बेटे, हमें तो भोजन से मतलब है। किसी के कर्म में कोई हिस्सा नहीं बटाता।" तब वह अपनी पत्नी के पास गया और उससे भी वही प्रश्न किया। पत्नी ने भी वही जवाब दिया जो माता-पिता ने दिया था। इनके उत्तर सुनकर वह उदास हुआ और मुँह लटकाये नारद के पास आया। बोला, "मेरे कुकर्म के फल में कोई हिस्सा नहीं बटायेगा। आप ठीक कहते थे।" नारद बोले, "अब तेरी समझ में बात आई ! अरे तू तो हीरा है ; तेरे ऊपर मैल चढ़ गई है। अब तू परमतत्त्व का ध्यान कर। तू मालिक से प्रेम कर। तू कुछ का कुछ हो जायेगा।" नारद ने रत्नाकर को नाम मन्त्र दिया। और वही रत्नाकर डाकू आगे चल कर आदि ऋषि बाल्मीकि बना। कौन पापी है ? कौन ऊँच है, और कौन नीच है ? कहते हैं कि वाल्मीकि ने उल्टा नाम "मरा-मरा" जपा। यह ग़लत है। मरा-मरा नहीं कहा ; राम-राम कहा। आप सब ऊपर से आये हो। परमतत्त्व की "धारा" के साथ उतर कर आये हो। और जब उस परमतत्त्व से मिलने की इच्छा होती है तब "धारा" से उलट कर "राधा" बनते हो। ऊपर जाने के लिए सुरत को उलट कर ऊपर ले जाना होता है और तब राधा बनकर स्वामी से मिलते हो—राधास्वामी आपको गति मिलती है, राधास्वामी की अवस्था मिल जाती है। आप सब वाल्मीकि बनते हो। वाल्मीकि ने हज़ारों वर्ष पहले ही रामायण लिख डाली। फिर कौन ऊँचा, कौन नीचा है ? यह सब हमारा अपना ख्याल है। बल्कि जो अपूर्ण है और उसे अपनी अपूर्णता का ध्यान आता है तो वह महसूस करता है कि मैं

क्या था और क्या से क्या हो गया। स्वामी जी महाराज ने लिखा है, 'तू तो थी सतपुरुष की अंशी; गोत लजाया शर्म न आई!' आपकी सुरत को—आपकी विशुद्ध आत्मा को कहा जा रहा है। ऋषियों ने जिसको विशुद्ध आत्मा कहा, सन्तों ने उसको सुरत कहा। वह सुरत ही आपका असली हीरा है। वह सुरत ही शक्ति का खजाना है जो यहाँ आप में मौजूद है। उसी की शक्ति आपकी आत्मा को ताकत देती है, आपके मन को ताकत देती है, आपकी बुद्धि को ताकत देती है और आपके शरीर को ताकत देती है। उसी सुरत की शक्ति के बल पर आज वेंकटेश्वर सेठ बना बैठा है, उसी शक्ति से कोई प्राइम मिनिस्टर बना बैठा है। सुरत की शक्ति को आप जिधर लगा दोगे, उधर ही आपको सफलता मिलेगी। उस शक्ति को आप नीचे ले जाओगे तो दुनियावी तरक्की मिलेगी; और अगर उसी शक्ति को आप ऊपर ले जाओगे तो आप अपने निजरूप को पहचान कर वहाँ पहुँचोगे जहाँ आपको परिपूर्णता मिल जायेगी। आपको वह राधास्वामी अवस्था मिल जायेगी जहाँ पहुँच कर न किसी से राग है, न किसी से द्वेष है। यह सन्तमत का रास्ता सनातन धर्म की आखिरी सीढ़ी है। राधास्वामी मत कोई अलग फिरका नहीं है। जो बात ऋषियों ने कही, भगवान् राम और कृष्ण ने कही, आदि सन्तों ने कही, वही बात कहने के लिए मालिक बार-बार आता है :—

'नाना भाँति राम अवतारा, रामायण शत कोटि अपारा।'

चूँकि इस समय जीव बहुत दुःखी हैं, हाँ, यह मैं मानता हूँ कि इस समय अत्याचार बहुत हो रहा है, इसका एक और भी कारण है कि :—

'तू तो थी सतपुरुष की अंशी, गोत लजाया शर्म न आई।'

तुमने खुद अपने आपको ईर्ष्या-द्वेष में फँसा लिया।

मन्दिर या मसजिद की एक ईंट उखड़ गई तो खून की नदियाँ बह गईं ; और जो असली मानव मन्दिर है उसको कत्ल करके तुम समझते हो कि तुम खुदा के पास जा रहे हो। दुनिया के दुःखों से बचने का एकमात्र रास्ता है—'शिवसंकल्पमस्तु'। अर्थात् हम अपनी ओर से जान-बूझ कर कोई ऐसा संकल्प-विचार न करें कि हमारे मन, वचन या कर्म से किसी को दुःख पहुँचे। इस मार्ग पर चलने मात्र से एक अधम सन्त बन सकता है। सिर्फ इतनी सी बात है 'शिवसंकल्पमस्तु'। आप लाख मन्दिर में पूजन करें, घण्टियाँ बजायें, लेकिन मन से आप किसी की हानि चाह रहे हैं तो आप कभी सुखी नहीं रह सकते। माताओं को छोटे बच्चों को, ग़लती करने पर, पीटना नहीं चाहिए। मनोविज्ञान कहता है कि अगर माँ बच्चे को पीटती है तो उसे स्त्री जाति से नफरत हो जाती है। अगर बाप पीटता है तो वह पुरुष जाति से घृणा करने लगता है। और इसी कारण से वह स्कूल में पढ़ने में कमज़ोर और असफल होता है। मेरे दो लड़के हैं, अब तो वे बड़े हो गये, पीएच्. डी. हो गये, लेकिन बचपने से मैंने उन्हें कभी पीटा नहीं। हमारे शास्त्रों में लिखा है—'लाडयेत् पञ्च वर्षाणि'। पाँच वर्ष तक तो प्यार से पालना चाहिए। 'षोडशवर्षाणि ताडयेत्'। सोलह वर्ष तक कुछ प्रताड़ना करो। मैंने तो प्रताड़ना भी नहीं की और वो बच्चे बहुत अच्छे हैं। अमेरिका में रहते हुए न सिगरेट पीते हैं न चाय। उनका जीवन प्रेममय है। एक बार की बात बताऊँ, 1983 में मेरा बड़ा लड़का अरुण यहाँ आया। उसके लिए हम लड़की देख रहे थे। हम जयपुर से जोधपुर जा रहे थे। मेरे घर में एक बच्चा है काम करने वाला। उसको मैं नौकर नहीं कहता। उसे हम बच्चे की तरह प्यार करते हैं। तो हम पाँच व्यक्ति जा रहे थे

जोधपुर। माता जी ने भतीजे से कहा स्टेशन जाकर चार टिकटें फर्स्ट क्लास की और एक सेकेंड क्लास की रिज़र्व कराओ।" अरुण तुरत बोल पड़ा, "सेकेंड क्लास की सीट किसके लिए ?" माता जी ते कहा, "राम के लिए।" वह बोला, "क्यों ? क्या वह आपका बेटा नहीं है ?" माता जी बोलीं, "भई, फर्स्ट क्लास में चार ही रिज़र्वेशन मिलती हैं, ज़्यादा नहीं।" उसने तुरत कहा, "ठीक है, राम फर्स्ट क्लास में जायेगा, मैं सेकेंड क्लास में जाऊँगा।" यह उसका प्रेम है। आप भी अपने बच्चों को प्यार दोगे तो वे भी बड़े हो कर प्यार देंगे। महाराज जी ने भी यही कहा है कि बच्चों को मारना-प्रताड़ना नहीं करनी चाहिए बल्कि प्यार से समझाओ। शारीरिक चोट की अपेक्षा कटु बचन से आप जो क्षति पहुँचाते हैं, वह ज़्यादा खतरनाक है। शरीर का घाव तो मिट जाता है, लेकिन मन का घाव नहीं मिटता। सास और बहू जो आपस में ताना के वचन बोलती हैं, यह और भी खतरनाक है। सूक्ष्म कर्म स्थूल कर्म की अपेक्षा ज्यादा हानि या लाब पहुँचाने वाला होता है। आप अपनी वाणी को ही सम्हालो तो और कोई ज़रूरत नहीं। किसी से कुछ कहना है, उसे मीठ शब्दों में कहो। जब मैं विश्व-विद्यालय में डीन था तो बड़े-बड़े खतरनाक छात्र आफिस में आते थे पिस्टल लिये गुर्राते हुए, "कहाँ हैं डीन साहिब ?" और पाँच मिनट में मुस्कराते हुए चले जाते थे। मीठे वचनों का यह प्रभाव होता है। अगर आप अपनी वाणी को कन्ट्रोल में रखें तो कर्म कभी हानिकारक हो ही नहीं सकता। वाणी एक तरफ आपके विचार से जुड़ी होती है, और दूसरी तरफ कर्म से। 'वाणी गुरु, गुरु है वाणी, वाणी अमृत सार।' वाणी एक ऐसा दिव्य दीपक है जो अन्दर भी प्रकाश करता है और बाहर भी। अगर आप कटु वचन न बोलो तो क्रोध

आयेगा ही नहीं। और मधुर वचन से आप सबको वश में कर सकते हो। फिर 'वचने का दरिद्रता!' मीठे वचन बोलने में कोई पैसे तो लगते नहीं। और आपके मन में कभी कोई विकार नहीं आयेगा। हाँ, कभी-कभी हमें ज़ोर से बोलना पड़ता है। जो शासक है, अफसर है वो अगर ज़ोर से न बोले तो कर्मचारी ठीक से काम ही नहीं करेंगे। बादशाह बने हुए हैं; नीचे से ऊपर तक रिश्वतखोरी है। आप क्या करोगे? भई प्रसाद के रूप में दे दो। क्या किया जाये! किसी भी दफ्तर में जाओ! क्लर्क साहिब दस बजे आये, और ग्यारह बजे चाय पीने गये। वहाँ से बारह बजे आये तो एक से तीन बजे तक लंच पर गये। ऐसी अवस्था में कुछ कड़ापन होना चाहिए। तो अगर ऐसी हालत में आप किसी को कटु शब्द कहो तो उसकी भलाई के लिए। अगर आप का गुरु आप से ऊँचा बोल तो समझो कि आपका काम बन गया। तो अगर आप अपने मातहत को कटु शब्द बोलो भी, लेकिन मन से कभी उसका बुरा मत चाहो। आपके मन को तो कोई नहीं देख रहा है। कोई आदमी आप से नफरत करता है, आप उससे प्यार करो। आखिर वो हार कर आपसे प्यार करने लगेगा। अगर आपने उससे नफरत की तो आपकी हार हो गई। यह जगत् प्रेममय है, प्रेम के लिए है। हमें सबसे प्रेम करना चाहिए। प्रेम से ही लोक और परलोक दोनों बन जाते हैं। आप एक बार संकल्प करके तो देखो। अगर आपके चारों तरफ सुरक्षा का एक कवच न बन जाये तो आप बेशक मेरी बात मत मानना। योगाभ्यास क्या है? मालिक से प्रेम करना ही तो समाधि ध्यान है! दिन-रात मालिक-मालिक का स्मरण करने से जब प्रेम की शक्ति बढ़ जाती है, तब आप का मन शुद्ध हो जाता है और आपका सब काम ठीक हो

जाता है। इसलिए इसी दृष्टि से यह शब्द आज मैंने सुनवाया। कौन ऊँच है ? कौन नीच है ? दाता दयाल जी ने यह शब्द परम दयाल जी को उस समय लिखा जब वह राधास्वामी धाम में सालाना भण्डारे के अवसर पर आये हुए थे। तो वहाँ रामबुझारथ लाल नाम के एक स्टेशन मास्टर भी आये हुए थे जो धाम के निर्माण में रेलवे का कुछ सामान नाजायज तरीके से दान करते थे। परम दयाल जी महाराज ने दाता दयाल से कहा, "दाता, तेरी धाम उजड़ जायेगी। क्योंकि इसमें ग़लत चीज़ें लग रही हैं।" दाता दयाल ने कहा—"तेरी बात ठीक है। धाम तो उजड़ जायेगा। लेकिन जिस दृष्टि से तू बुरा मान रहा है, यह बुरा मत मान।" और इसी बात को उन्हें समझाने के लिए यह शब्द लिखा :—

'जो मेरे प्रीतम का प्यारा, मेरा भी वह प्यारा।'
जो सतगुरु का नाम दिवाना, आँखों का है तारा।'

अगर कोई प्रेम भाव से कोई वस्तु लाकर सतगुरु को भेंट चढ़ाता है, तो मैं नहीं देखता कि वह कैसे, कहाँ से लाकर चढ़ाता है। मैं उसे प्रेम से स्वीकार करता हूँ। यह ठीक है कि अपूर्णता पाप है। लेकिन मैं भी तो पापियों के तारने के लिए ही इस जगत् में आया हूँ! उनको पूर्ण बनाने आया हूँ :—

'जात न पूछूं पाँव न पूछूं, नाहीं कुल परिवारा।
प्रेम प्यार का नाता मानूं, प्रेम का सकल पसारा॥'

मालिक तो केवल आपके प्रेम के भाव को देखता है। आप कहाँ से क्या लाये! क्या नहीं लाये! इस बात को वह नहीं देखता :—

'सुन फकीर यह भेद अनूपा, अचरज अगम अमाना।
जिस पर दया दृष्टि सतगुरु की, तेहि बड़भागी जाना॥'

पाप-पुण्य सब समाप्त हो जाता है जब आप सतगुरु के पास आते हैं। दाता दयाल जी ने परम दयाल जी की यह बात तो मान ली, जैसे नारद जी की बात विष्णु भगवान् ने मान ली थी। नारद के मन में अहंकार आ गया था। उन्होंने एक बार तपस्या की। इन्द्र डरे कि कहीं नारद उनका इन्द्रासन न ले लें। जैसे कुत्ता हड्डी लिए हो और शेर उसे दिखाई दे जाये, तो वह समझता है कि शेर उसकी हड्डी लेने आ रहा है। शेर तो ज़िन्दा मांस खाता है। सन्त भी ज़िन्दा पुरुष को खाता है। कैसे ? जिसको आप ज़िन्दगी समझे बैठे हो उसको खतम करता है सन्त। इन्द्र ने सोचा नारद की तपस्या भंग करो। उसने कामदेव को भेजा। कामदेव ने ऐसी माया रची कि चर-अचर पशु-पक्षी, पर्वत-वृक्ष सब में कामातुरता जागृत हो गई। लेकिन नारद पर इसका कोई असर नहीं हुआ। आखिर में कामदेव ने आकर नारद को नमस्कार किया और कहा—"महाराज मैं आपसे हार गया। वह कामदेव जिसने शंकर पर बाण चला दिया था। अब नारद को अहंकार आ गया। भक्त को जब अहंकार आता है तो सतगुरु उसकी रक्षा का उपाय करता है। नारद अहंकार में फूले शंकर के पास पहुँचे और बोले, "महाराज, कामदेव मुझसे हार गया। शंकर बात समझ गये और बोले, "आप तो मुझसे श्रेष्ठ हो, बहुत ऊँचे हो, लेकिन एक बात ध्यान रखना, यह बात कहीं मेरे गुरु विष्णु से मत कहना।" नारद कुछ दिनों बाद भूल गये और विष्णु से जाकर यह बात कह डाली। विष्णु ने कह तो दिया कि, "नारद, आप बहुत श्रेष्ठ हो।" लेकिन उनके मन में नारद के प्रति चिन्ता हो गई और उनके अहंकार को मिटाने के लिए उन्होंने तत्काल एक मायानगरी रच दी। सुन्दर मायानगरी के राजा-रानी बड़े सुन्दर थे और उनकी एक

राजकुमारी परम रूपवती थी। नारद जी उधर से गुज़रे तो राजा-रानी ने उनका बड़ा सत्कार किया और प्रार्थना की कि महाराज, राजकुमारी की हस्त रेखा देखिये। नारद ने हस्त रेखा देखी तो उन्हें ज्ञात हुआ कि इस राजकुमारी का जिस पुरुष से विवाह होगा वह त्रिलोकी नाथ हो जायेगा। नारद ने उसकी सुन्दरता और भाग्य को देखा तो उनके मन में लालसा उत्पन्न हुई कि इस राजकुमारी से वे स्वयं विवाह कर लें। अगले दिन ही राजकुमारी का स्वयंवर होना था। नारद तुरत विष्णु भगवान् के यहाँ जा पहुँचे और बोले, "भगवन्, अमुक राजा की राजकुमारी का कल स्वयंवर होने वाला है। मैं चाहता हूँ कि वह वरमाला मेरे गले में डाले और मुझसे उसका विवाह हो जाये। तो कृपा करके, हे हरि, आप अपना रूप मुझे दे दो।" हरि का मतलब विष्णु भी है, और बन्दर भी है। विष्णु भगवान् बोले, "अच्छा नारद जाओ जिस रूप से तुम्हारा कल्याण हो, वही रूप मैंने तुमको दिया।" अब नारद हरि का रूप लिए हुए स्वयंवर में जा पहुँचे और राजकुमारों की पंक्ति में बैठ गये। किन्तु राजकुमारी ने वरमाला गले में डालना तो दूर, उनकी तरफ आँख उठाकर भी नहीं देखा और कतरा कर निकल गई। अन्त में उसने भगवान् के गले में वरमाला डाल दी और लक्ष्मी पति भगवान् विष्णु से उसका विवाह हो गया। नारद बड़े दुःखी हुए। वहाँ शिव जी के दो गण भी बैठे हुए थे जो नारद का रूप देखकर बहुत हँसे और बोले, "आप ज़रा अपना रूप तो जा कर देखो!" नारद ने जा कर सरोवर में जब अपना रूप देखा तो एक विकट बन्दर का उनका रूप था। उन्हें भगवान् विष्णु पर बड़ा क्रोध हुआ, और क्रोध में ही आवाहन किया तो भगवान् विष्णु और लक्ष्मी वहाँ प्रकट हो गये। नारद बोले, "मेरे

साथ इतना छल किया ? मैं आपको शाप देता हूँ कि आपको जन्म लेना पड़ेगा और स्त्री के बिछोह में दुःखी होना पड़ेगा और विरह का अनुभव करना पड़ेगा।" भगवान् ने कहा, "आपका शाप स्वीकार है।" पर जब नारद को होश हुआ और उन्हें पता चला कि भगवान् ने उनके अहंकार को मिटाने के लिए वह माया की नगरी रची थी, तो उन्हें बड़ा पश्चाताप हुआ और बोले, "भगवान्, मैं अपना शाप बदलता हूँ। आप पत्नी-विरह में रोओगे तो ज़रूर, लेकिन एक बन्दर की सहायता से ही आपकी पत्नी वापिस आवेगी।" बात तो यह थी कि भगवान् ने भक्त की बात रखी। दाता दयाल ने अपने परम दयाल जी की बात रखी और धाम को उजड़ जाने दिया। लेकिन उनको यह समझाया कि तू ग़लत है ; किसी से नफ़रत मत कर :—

'जो मेरे प्रीतम का प्यारा, मुझको भी वह प्यारा।
जो सतगुरु का नाम दिवाना, आँखों का वह तारा।।'

चाहे कोई कितना भी पतित क्यों न हो मेरे परम दयाल, लेकिन उसका हाथ नहीं छोड़ना। और परम दयाल जी ने उम्र भर दाता दयाल की इस आज्ञा का पालन किया, और चाहे कोई कैसा भी क्यों न रहा हो, लेकिन जिसका हाथ पकड़ा उसे नहीं छोड़ा। और बात यह बिलकुल ठीक है। मेरी बचपन से ही यह प्रवृत्ति थी कि लोग जिसे जितना ही बुरा कहते थे, मेरी उसके प्रति उतनी ही सहानुभूति होती थी। लोग जिसे नीच कह कर बदनामी करते हैं, मैं उसे प्यार करता हूँ। क्योंकि सभी उसकी प्रताड़ना कर रहे हैं। कोई क्या जानता है कि वह वाल्मीकि है या श्वपच है, या ऐसा सन्त होने वाला है। क्योंकि असल में है तो वह हीरा। मेरा तो यह स्वभाव बचपन से रहा है। और मेरा यह जो अनुभव है, आगे से आगे ही बढ़ता चला गया। साधना जो बच्ची शब्द पढ़ती है, मेरे साथ यहाँ भी आई है। पहले मुझे

मालूम नहीं था कि परम दयाल जी महाराज के साथ शब्द पढ़ने वाली भण्डारो माता ने इस बच्ची को अपनी पुत्री के रूप में अपने पास रखा था। परम दयाल जी महाराज कहते थे, "भण्डारो के बिना मेरा सत्संग फीका लगता है। मैं इसे स्वभाविक ही लाया। यह बच्ची मानवता मन्दिर के स्कूल की प्रिंसिपल है। स्कूल के लिए किताबें खरीदने दिल्ली आई थी। संयोग से मेरे साथ शब्द पढ़ने के लिए जो वकील साहिब और उनकी धर्मपत्नी आते थे, वे नहीं आये। शब्दानन्द को बुलाया था, लेकिन वह भी दिल्ली नहीं आया। इन परिस्थितियों में मैंने इस साधना को कहा कि तू शब्द पढ़ने चल सकती है? यह बच्ची तैयार हो गई। इसकी माँ ने इसको एक बात कही—कि "बेटा, तू सत्संग में शब्द पढ़ने जा रही है। अगर मैं यहाँ मर भी जाऊँ, तो तू बिलकुल चिन्ता न करना, सत्संग की सेवा पूरी करना।" ऐसा स्वभाव है इसकी माता का। लोग जिसे बुरा कहते हैं, वह सबसे ही भला, अच्छा होता है। दाता दयाल जी ने यही बात परम दयाल जी को कही कि देखो, जो कोई भी तुम्हारे सत्संग में आ जाये, उसे बुरा मत मानो।" और वही रामबझारथ लाल को परम दयाल जी महाराज जब धाम जाते थे तो उन्हें कलेजे से लगाकर प्यार करते थे। गुरु ने शिष्य की बात मानी, और जिसका हाथ पकड़ा उसे कभी नहीं छोड़ा। जो मालिक को प्यार करता है, वह आपका प्यारा है। मिसाल दी है कि कुत्ते-बिल्ली, जो एक मालिक के घर में रहते हैं अपने मालिक के प्यार को देखकर अपना स्वाभाविक बैर त्याग कर आपस में प्यार करते हैं। अगर कुत्ते-बिल्ली अपने मालिक का प्यार देखकर अपना स्वाभाविक बैर त्याग कर परस्पर प्यार कर सकते हैं, तो इन्सान को तो अवश्य एक दूसरे से प्यार करना चाहिए :—

'कुत्ते बिल्ली रहें परस्पर, बैर भाव सब छोड़ें।
निज मालिक के प्रेम को परखें, प्यार का नाता जोड़ें ।।
वैसे मुझको पापी प्यारे, गुरु की शरन जो आयें।
प्यार करूँ नहिं उनको कैसे, गुरु जब चरण लगायें ।।
साधन प्रेम का सुगम सुहावन, भक्ति भाव सुखदाई।
पापी भक्ति के अधिकारी, समझ में मेरी आई ।।

जो अपनी कमी को महसूस करता है, उसे ही पूर्णता का अधिकार है। इसलिए सिर्फ प्रेम का नाता मानो। तो सतगुरु सब को प्रेम करते हैं। सतगुरु के प्यार की धारा समुद्र है, जितना आपका पात्र है, उतना आप ले सकते हो। सतगुरु में किसी के प्रति गैर भाव है ही नहीं। हाँ, यह जरूर है कि हर एक के प्रति प्यार का नमूना अलग-अलग होता है। सतगुरु की सेवा हर आदमी एक जैसा नहीं कर सकता। कोई शरीर की सेवा कर सकता है, कोई मानसिक सेवा कर सकता है, कोई शब्द पढ़ने की सेवा करता है। लेकिन सतगुरु का प्यार सब के लिए बराबर होता है। उसका प्यार अत्यन्त है। लेकिन हर एक के कर्म कटाने के लिए सतगुरु हर एक से अलग-अलग काम लेता है :—

'राधास्वामी नाम भजो नित, नाम से लव रहे लागी।
जो कोई नाम से राखे प्रीती, सो मेरा अनुरागी ।।'

आखिर में दाता दयाल ने कह दिया कि चाहे राम बुझारथ लाल हो, चाहे कोई हो, जो मालिक के प्रेम के लिए मेरे दास आयेगा, मेरा तो उस सब से अनुराग है। राग और अनुराग दो चीजें हैं। राग नहीं होना चाहिए। राग किसी से मोह को कहते हैं। राग में पक्षपात होता है। आप अपने बच्चों से राग करते हैं तो दूसरों के बच्चों से द्वेष करते हैं। अनुराग है उस अनन्त प्रेम में बह जाना जो धारा से राधा हो रही है ; जो आपको मालिक की तरफ ले जाती

H. H, Manav Dayal ji Maharaj
Satsang Tour Hissar 1985 with Acharya Vijay Naresh Negi extreme left, Mata ji on the left and Mrs. Prem Negi on the extreme right.

H. H. Manav Dayal ji Maharaj Dr. I. C. Sharma Shaking hands with the Prime Minister Sh. Rajiv Gandhi at Hyderabad University.

है। जब वह मालिक हर एक के दिल में मौजूद है, तब किस व्यक्ति से मैं नफ़रत करूँ ? जब हमारा प्यार मालिक से हो जाता है, तो वही परम भक्ति है, वही परम प्यार है। यही भगवान् कृष्ण ने गीता में कहा है :—

'यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति।
अहं तं न प्रणश्यामि, सच मे न प्रणश्यति ।।'

सच्चा गुरुमुख वह है जो रात-दिन हर दम गुरु की ही बात करता है—"मेरा गुरु ऐसा है, ऐसा है, ऐसा है।" वह गुरुमय हो जाता है, और स्वयं गुरु है। मालिक जब एक है और आपने उसी को माना है तो आप सब जगह; सब में उसी मालिक के रूप को देखोगे, जैसे कि तुलसी दास जी ने देखा। अगर आपको उसके मिलने की सच्ची लगन और तड़प है तो हर जगह आपको मालिक ही दिखाई देगा। मजनू का सच्चा प्यार था लैला से। उसके शहर में दो आदमियों में ज़मीन का झगड़ा हुआ। उन्होंने आपस में तै किया कि मजनू सीधा-सच्चा आदमी है, उसी को मुन्सिफ़ बना दो। दोनों मजनू के पास आये और बोले "मजनू तू हमारा झगड़े का फैसला कर दे।" एक ने कहा ज़मीन मेरी है, दूसरे ने कहा ज़मीन मेरी है। मजनू ने कहा कि न ज़मीन तेरी, न उसकी। ज़मीन तो लैला की है। मजनू को हर जगह लैला दिखाई देती थी। अरे मालिक तो एक है! अगर तुम्हें उससे प्यार है, तो तुम जहाँ भी जाओगे, मन्दिर, मसजिद या गिरजाघर में हर जगह तुम्हें मालिक ही दिखाई देगा। मालिक के साथ अनुराग जो होता है वह सारे भेद-भाव को मिटा देता है। राग भेद-भाव पैदा करता है। इसलिए दाता दयाल ने कहा है कि जो मालिक का प्यार है वह राधा को स्वामी से मिला देता है। पहले आप यह देखो कि क्या आप राधा बन गये हो या धारा में बहे जा

रहे हो ! क्या आप नीचे बह जाना चाहते हो ? अगर नीचे जाना चाहते हो तब आप मालिक से नहीं मिलोगे :—

'बैठक स्वामी अद्भुती, राधा निरखनहार ।
और न कोई लख सके, शोभा अगम अपार ।।'

स्वामी की बैठक अद्भुत है ; उसे राधा ही देख सकती है और राधा ही वहाँ पहुँच सकती है । लेकिन जब तक आप अपने मकान और बच्चों के प्यार में फँसे हो तब तक आप धारा में बहे जा रहे हो । अरे उलटे चलो, तब स्वामी के पास पहुँचोगे :—

'उल्टा मारग सन्त मता है, रस बरसे असमानी हो ।'

सतगुरु तुम्हारी सुरत को उलटे मार्ग पर लगा देते हैं जिससे तुम्हारा लोक भी बन जाता है और परलोक भी बन जाता है । यही सन्तमत है, यही राधास्वामी मत है, यही मानवता धर्म है, और यही सनातन धर्म की आखिरी सीढ़ी है । आज के सत्संग के द्वारा मैं आपको सन्तमत या राधास्वामी मत के अनुसार मालिक के इस जगत् की रचना और मनुष्य जीवन के उद्देश्य के बारे में यही बताना चाहता था ।

सबको राधास्वामी !

शोक समाचार

सभी सत्संगी भाई-बहनों को अत्यन्त दुःख के साथ सूचित किया जा रहा है कि परम दयाल जी महाराज की पुत्र-वधू श्रीमती सरला जंग के सहोदर श्री ईश्वर चन्द्र जी कौशिक का दिनांक 16-2-87 को प्रातः 9 बजे अचानक स्वर्गवास हो गया ।

उनके आकस्मिक निधन पर मानवता मन्दिर परिवार हार्दिक शोक प्रकट करते हुए परम पिता दयाल मालिक से प्रार्थना करता है कि दिवंगत आत्मा को शान्ति दें तथा उनके शोकाकुल परिवार और सम्बन्धी जन को इस क्षति के सहन करने की शक्ति प्रदान करें ।

—जनरल सेक्रेटरी

मासिक वैसाखी सन्देश

1987

परमसन्त हजूर मानव दयाल

डा० ईश्वर चन्द्र शर्मा जी महाराज

मेरे परम प्रिय सत्संगियो !

राधास्वामी, परम दयाल जी सहाई !

1987 का वैसाखी उत्सव परमसन्त परम दयाल, पूर्णधनी, मालिकेकुल पंडित फकीर चन्द जी महाराज की शारीरिक अनुपस्थिति में पाँचवाँ उत्सव है। पिछले पाँच वर्षों में मानवता मन्दिर में तथा परम दयाल जी महाराज के मानव जाति की जागृति के परम उद्देश्य के फैलाने में एक खास तरक्की हुई है। मानवता मन्दिर की गतिविधियाँ पहले के मुकाबले में कई गुना बढ़ गई है। मासिक सत्संगों में सत्संगियों की रुचि, उनका विश्वास और उनकी श्रद्धा का कोई ठिकाना नहीं। इन सत्संगों पर आने वालों की संख्या अब इतनी बढ़ गई है कि सत्संग-भवन का हाल बहुत छोटा पड़ता है। लोगों को बरामदे में और चबूतरे पर बैठना पड़ता है।

सौभाग्यवश भाग्य माता जी की देखरेख में मानवता मन्दिर का नक्शा बदल गया है। बरामदे से लेकर सड़क तक संगमरमर के पत्थर के टुकड़ों का चमकता-दमकता

सुन्दर फर्श बिछ गया है। इसके अलावा सेहन में सुन्दर बगीचा भी लगा दिया गया है। परम दयाल जी महाराज की समाधि और उनका मन्दिर सुन्दर ही होना चाहिए ताकि दर्शकों का मन स्वच्छता और सौन्दर्य को देखकर निर्मल हो जाये। भारत में प्राय: मन्दिरों में और धर्म-स्थानों पर सफाई नहीं होती। वास्तव में जब व्यक्ति बाहर सफाई नहीं रख सकता तो उसका मन भी साफ नहीं रह सकता।

जैसा कि मैंने ऊपर बताया है रूहानियत की दृष्टि से दाता दयाल जी और परमदयाल जी महाराज के सच्चे और सीधे मार्ग में ज़्यादा से ज्यादा लोग शामिल हो रहे हैं। गुरुमत की सच्चाई सारे विश्व में फैल रही है और देश-विदेश में मानवता धर्म एवं राधास्वामी धर्म यानि कि सन्तमत के केन्द्र खुल रहे हैं और उनके चलाने की ज़िम्मेवारी भी हर केन्द्र के नज़दीक रहने वाले सत्संगी खुद ही ले रहे हैं। जब मैं 1982 में पहली बार इंग्लैण्ड के दौरे पर गया, वहाँ पर पहली बार ही बर्मिंघम में वहाँ के गीता भवन में दो विशाल सत्संग हुए जिनमें सैकड़ों लोगों ने भाग लिया। उसमें ज़्यादा तादाद सनातन धर्म के अनुयायियों की थी जो सनातन धर्म पर चलने वाले थे। उन्हीं सत्संगों के प्रभाव से पिछले चार वर्षों से लगातार इसी गीता भवन में मुझे सत्संग देना पड़ता है। इसके फलस्वरूप राधास्वामी मत के बारे में जो ग़लत-फहमियाँ थीं वह दूर हो रही हैं। पहले लोग राधास्वामी नाम से कतराते थे और समझते थे कि यह कोई ऐसा फिरका है जो सनातन धर्म का शत्रु है। किन्तु जिस सच्चाई को मैंने उसी गीता भवन में चार साल से बयान किया है, उसके कारण उस मन्दिर में आने वाले सभी हिन्दु इस बात को स्वीकार कर चुके हैं कि राधास्वामी मत, यानि कि मानवता धर्म, सनातन धर्म की आखिरी सीढ़ी है और वह किसी धर्म

का खण्डन नहीं करता। जब-२ भी मैं गीता भवन में सत्संग देता हूँ उसके अन्त में सभी लोग बड़े प्रेम से 'राधास्वामी-राधास्वामी' का गीत गाया करते हैं। पिछले वर्ष परम दयाल जी महाराज की जन्म-शताब्दी के सिलसिले में मैंने जो लगातार सत्संग दिये वह गीता भवन वालों ने वीडियो टेप से रिकार्ड कर लिये थे। यह तीन घण्टे का वीडियो टेप मानवता मन्दिर में मौजूद है। इसका शीर्षक है "भगवद् गीता और सन्तमत" यह वीडियो टेप दूसरे केन्द्रों पर भी दिखाया जायेगा। अगर कोई केन्द्र इस वीडियो टेप को मंगवाना चाहे और सत्संगियों को दिखाना चाहे तो वह हमें इस बारे में लिख सकता है।

1982 में ही बर्मिंघम के श्री जगदीश चन्द्र गुप्ता ने मुझे कह दिया था कि परम दयाल जी महाराज ने 1980 में ही भविष्यवाणी की थी और बर्मिंघम में ही कह दिया था "जब मेरे बाद यहाँ I. C. Sharma सत्संग देने आयेगा तो संगत बहुत बढ़ जायेगी।" मैंने तो कई बार आपको कहा है कि पिछले पाँच वर्षों में जो मेरा आन्तरिक रूहानी परिवर्तन हुआ है उसको मैं बयान नहीं कर सकता। अब तो सत्संगों में मैं इस कदर बह जाता हूँ कि मुझे यह होश नहीं होता कि मैं क्या कह रहा हूँ! सत्संगी ही स्वयं सत्संग की धारा में बह जाते हैं न उन्हें समय का ध्यान रहता है न मुझे कभी यह ख्याल आता है कि मैं घण्टे-डेढ़ घण्टे के अन्दर सत्संग समाप्त कर दूं। मैं और सत्संगी एक हो जाते हैं। उनका प्रेम सामूहिक रूप से मुझ पर प्रभाव डालता है और मेरा प्रेम उमड़ कर उन सबको लपेट लेता है। सत्संग क्या होता है? एक सहज समाधि हो जाती है और मेरे समेत सभी सत्संगी एक आनन्द के सागर में डूब जाते हैं। इन अनुभवों से जिस असली शब्द और असली नाम पर मैं पहुँच

जाता हूँ वही राधास्वामी अवस्था है। अब मैं परम दयाल जी के उन शब्दों को पूरी तरह समझ पाया हूँ जो उन्होंने 1980 में क्लीवलैंड में रात को दो बजे डा० परस राम को कहे थे। उन्होंने यह कहा था "परसराम, मैं जानता हूँ कि भारत में बहुत से राधास्वामी मत के आचार्य हैं। ऐसे भी लोग हैं जो चालीस साल से भी अधिक समय से मेरे साथ जुड़े हुए हैं। अभ्यासी भी हैं, एकआध मेरे गुरुभाई भी हैं, किन्तु मैंने केवल I. C. Sharma को चुना है। इसमें एक राज़ है।"

यह राज़ धीरे-२ मुझे और मेरे कुछ साथियों को स्पष्ट होता चला जा रहा है। मेरा अपना निजस्वरूप पूर्णरूप से निखरता हुआ दिखाई दे रहा है। ऐसा अनुभव पहले कभी भी नहीं हुआ था। जिस उद्देश्य के लिए इस बार मैंने मानव का चोला धारण किया है, वह क्रमशः मेरे कुछ साथियों और बहुत से सत्संगियों के सहयोग से विश्वभर में साकार होता हुआ दिखाई दे रहा है। यह उद्देश्य मेरा निजी उद्देश्य नहीं है। यह किसी विशेष परिवार, समाज, राष्ट्र, मत-मतान्तर या सम्प्रदाय तक सीमित नहीं है। यह वह रब्बी एवं ईश्वरीय उद्देश्य है, वह जगद्-व्यापी धर्म की प्रक्रिया है जो सारी सृष्टि के उत्थान के लिए है। यह ब्रह्माण्डो धारा बहती हुई अपनी मौज में मानव और सम्पूर्ण जगत् को उभार रही है। यह बात परम दयाल जी महाराज ने अपने जीते-जी अनेक बार मुझे पत्रों में लिखी थी। मार्च 1981 को उन्होंने मुझे अमेरिका में जो पत्र लिखा वह प्रस्तुत है :—

मानवता मन्दिर,
होशियारपुर।

प्रियतम मानव दयाल शर्मा,
राधास्वामी !

डेढ़ महीने के दौरे के बाद मैं होशियारपुर वापिस लौटा हूँ। डा० कुन्दन लाल जोड़ा ने मुझे तुम्हारा पत्र दिखाया। मैंने भी तुम्हारे अनुवाद का एक अध्याय पढ़ा। सुनो मानव दयाल ! मेरा यह यकीन है कि आप इस पृथ्वी पर एक खास मक़सद लेकर ही आये हैं (Listen ! I believe thou you hath come on this earth with a certain Mission) मैं आपकी पवित्र हस्ती पर अपना सिर झुकाता हूँ। मैं खुश हूँ कि मुझे आप जैसी पवित्र हस्ती से मिलने का अवसर मिला है। मैं आपके होशियारपुर में आने का लगातार इन्तज़ार कर रहा हूँ। इस पृथ्वी पर मेरा मिशन समाप्त होने वाला है और मैं जल्दी से जल्दी इस संसार को छोड़ना चाहता हूँ। मैं तुम्हें इस मिशन को चलाने और उसमें कामयाबी पाने का दिल से आशीर्वाद देता हूँ। यह सन्तों का, दाता दयाल का, मेरा और तुम्हारा काम दुनिया के सभी राष्ट्रों में उस बरबादी के बाद, सच्चा रास्ता दिखायेगा जो जल्दी ही आने वाली है, जिसको कोई नहीं रोक सकता। विचार में जब ज़बर्दस्त ताक़त होती है। प्रजातन्त्र का आज का चुनाव का ढंग, धार्मिक मतभेद, नफ़रत, एक दूसरे के प्रति द्वेष और अविश्वास पर टिका है। लोभ और झूठा अहंकार आदि सभी अवगुण संसार भर के लोगों में बहुत ज़्यादा हो गये हैं, जिससे वातावरण पर बहुत बरा प्रभाव पड़ रहा है, इसलिए तबाही को रोका नहीं जा सकता। मानव बनने की शिक्षा मानव मात्र को भविष्य में मदद देगी।

आपका
फकीर

पुनः—'वैसाखी पर तुम्हारे ठहरने का आरामदेह इन्तज़ाम किया जायेगा।'

मैं जब भी इस पत्र को पढ़ता हूँ, मुझे इससे प्रेरणा मिलती है। मैं समझता हूँ कि परम दयाल जी के जीते-जी शायद एक या दो व्यक्तियों ने वास्तव में यह समझा हो कि वह सद्गुरु वक्त थे और अपने समय के युगावतार थे। जबसे मैंने अमेरिका से त्यागपत्र देकर परम दयाल जी महाराज की आज्ञा के अनुसार इस सच्चाई के अनुभव को बाँटने का काम शुरू किया है, मेरे रास्ते में जो-२ रुकावटें आती रही हैं, वह अपने आप ही दूर होती गई हैं। इसमें कोई मेरी महानता नहीं है। बात सिर्फ इतनी सी है कि परम दयाल जी महाराज को पहले-पहल मिलते ही मुझे यह पूर्ण विश्वास हो गया था कि वह सद्गुरु वक्त हैं और साक्षात् परमतत्त्व का अवतार हैं। मेरा यह दृष्टिकोण किसी अन्धविश्वास पर आधारित नहीं है, बल्कि मेरी अन्तरतम गहरी अनुभूति है।

मैं बचपन से ही यह महसूस करता था कि मेरा जीवन केवल मेरे लिए नहीं है अपितु किसी ऐसे उद्देश्य के लिए है जिसकी पूर्ति से मानवमात्र का भला होगा। यहाँ पर मैं साफ शब्दों में कह देना चाहता हूँ कि मैं अपने आपको कोई मसीहा या मानव जाति का सुधारक घोषित नहीं कर रहा और न ही मैं किसी झूठे अहंकार का प्रदर्शन कर रहा हूँ। मैंने कई बार आपसे बातचीत करते हुए मासिक सन्देशों में कहा है कि मेरी "मैं" है ही नहीं। मैं, "मैं" शब्द का प्रयोग केवल व्यवहार की दृष्टि से करता हूँ। जगत् का व्यवहार सापेक्ष दृष्टि से सच्चा है। मैं और आप शरीर, मन, बुद्धि और अहंकार तक अलग-२ हैं, लेकिन इन चारों भेदों के पीछे, मुझे और आपको एक बनाने वाला तत्त्व भी मौजूद

है। वही तत्व विशुद्ध आत्मा है, सुरत है, अविनाशी साक्षी सब भेदों के पीछे एक बनाने वाला सूत्र है, जैसे अलग-२ मनकों को पिरोने वाला एक सूत्र होता है। मैं बचपन से ही इन भेदों के पीछे सुनहरी सूत्र को अन्दर से महसूस करता चला आ रहा हूँ। कई बार मुझे ऐसा लगता है कि लोग बेकार में एक दूसरे से नफ़रत करते हैं। वह यह समझते हैं कि दूसरा व्यक्ति शरीर की भिन्नता के कारण हमारे से भिन्न है। एवं बुद्धि और अहकार (अलग-२ व्यक्ति होने का भाव) की भिन्नता के कारण हमारे से अलग है। सत्य तो यह है कि इन भेदों के पीछे हम सबको प्रेम में बाँधने का सूत्र एक ही सुरत है। जब यह सही है कि हम सब उस परमतत्त्व आधार के अश हैं, जो प्रेम के सिवाय और कुछ भी नही है। तो हम सब अलग-२ होते हुए भी एक हैं। जब मुझे यह अनुभव हो गया कि "मैं और आप" केवल बाहर से अलग हैं और अन्दर से एक हैं, तो मैं आपसे नफ़रत नहीं कर सकता, क्रोध नहीं कर सकता, ईर्ष्या नहीं कर सकता। अगर मैं आपसे नफ़रत करूँ तो अपने आपसे करूँ? यदि मैं आपसे क्रोध करूँ तो अपने आप से करूँ? यदि मैं आप से ईर्ष्या करूँ तो अपने आपसे करूँ? सच्चाई तो यह है कि भेदभाव केवल भाव हैं। इन भावों के पीछ प्रेम का भण्डार हम सबको एक बनाता है। जो इस भेद को समझ लेता है वही सद्गुरु का सच्चा सेवक है। दाता दयाल जी के शब्दों में :—

"राधास्वामी सतगुरु आये भेद दिया पूरा पूरा।
जो कोई भेद भाव को मेटे सतगुरु का सेवक सूरा।।"

सृष्टि की रचना भी इसी सच्चाई को ज़ाहिर करती है। ऋषियों ने और सन्तों ने हज़ारों सालों की खोज के बाद यह बताया कि सृष्टि के तीन दर्जे हैं: (1) भौतिक, (2) सूक्ष्म या मानसिक और (3) आत्मिक अथवा प्रकाशमय

कारण शरीर। इन्हीं तीन दर्जों पर ब्रह्मा विष्णु और शिव का राज्य है। ब्रह्मा को विराट् भी कहते हैं। यह विराट् कोटि-कोटि ब्रह्माण्डों का भौतिक दर्जा है जिसमें आकाशगंगाएँ, कोटि-कोटि सौरमण्डल और नक्षत्र मौजूद हैं। भौतिक विज्ञान सिर्फ इसी विराट् तक की खोज कर पाता है। हमारा भौतिक शरीर भी एक छोटे पैमाने पर विराट् ही है। इस मनुष्य के शरीर में पूरे ब्रह्माण्ड का नक्शा है इसलिए समाधि में चान्द, सितारे आदि दिखाई देते हैं। जो कुछ ब्रह्माण्ड में हैं वही हमारे पिण्ड एवं शरीर में है। कहना यह चाहिए कि जो कुछ छोटे रूप में हमारे भौतिक शरीर में है वही ब्रह्माण्ड में मौजूद है। कलियुग के सन्त अवतारों ने सहज में ही इस विराट् का अनुभव कराने के लिए सुरत-शब्द योग की सहज रीति को अपनाया है और उसका प्रचार किया है। इसी बात को कबीर साहिब ने एक दोहे में इस प्रकार कहा है :—

'जाका दर्शन इत्त है, वाका दर्शन उत्त ।
जाका दर्शन इत्त नहीं, वाका इत्त न उत्त ॥'

ब्रह्माण्डी सृष्टि का दूसरा सूक्ष्म दर्जा वह ब्रह्माण्डी मन है जिसकी शक्ति भौतिक जगत् को नष्ट नहीं होने देती इसी का नाम विष्णु देवता है। विष्णु ही ब्रह्माण्ड का आधार है इसलिए धार्मिक तसवीरों में ब्रह्मा को विष्णु की नाभि से निकलता हुआ दिखाया जाता है। जिस प्रकार ब्रह्माण्डी मन बाहरी जगत् का आधार है और उसका पोषण करता है उसी तरह से मानव का मन उसके शरीर का आधार है और उसको स्वस्थ रखता है। विष्णु तत्त्व को सन्तों ने अव्याकृत कहा है।

ब्रह्माण्डी मन स्वयं अपने आप में पूर्ण नहीं है। वह ब्रह्माण्डी आत्मा यानि कि कारण शरीर पर आधारित है।

इसी ब्रह्माण्डी कारण शरीर को शिव कहा जाता है। इसी को ऋषियों ने और सन्तों ने हिरण्यगर्भ यानि कि सोने का चमकता हुआ बीज अथवा अण्ड भी भहा है। मनुष्य का कारण शरीर उसकी आत्मा है जो प्रकाशमय है। आकाश-गंगा को विष्णु के चरणों से निकली हुई धारा कहा जाता है। जब यह धारा पृथ्वी पर अवतरित हुई तो उसे केवल शंकर ने ही अपनी जटा में स्थान दिया। विष्णु हमेशा शंकर का ध्यान करते हैं और उन्हीं से प्रेम की शक्ति पाकर जगत् का पालन करते हैं। इसी तरह से जब मानव अपने मन को प्रकाशमय आत्मा में विलीन कर देता है तो उसकी शक्ति बढ़ जाती है।

सृष्टि की रचना में सतपुरुष अलख, अगम और अनामी अपनी निज अवस्था में परिपूर्ण और परम दयाल है। उसी को राधास्वामी दयाल कहा जाता है। उसकी रचना जगत् के अन्दर ब्रह्मा, विष्णु और शिव तीन स्तरों पर होती है। यही रचना काल भी कहलाती है। किन्तु यह काल सतपुरुष की एक बूंद मात्र है। दूसरे शब्दों में काल दयाल का विस्तार है। उसी दयाल सतपुरुष को चौथा पद कहा जाता है। जैसे इस जगत् में ब्रह्मा, विष्णु और शिव उस अविनाशी सतपुरुष का स्थूल शरीर, सूक्ष्म शरीर और कारण शरीर हैं, वैसे ही मनुष्य की सुरत के शरीर, मन और आत्मा स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीर हैं। सुरत मनुष्य का चौथा पद है। जगत् के अन्दर सतपुरुष दयाल ज्ञानदाता सद्गुरु के रूप में सहज में ही जीवों को उनकी सुरत का अनुभव कराता है। जब मनुष्य अपनी सुरत को शरीर, मन और आत्मा से हटाकर सुमिरन, ध्यान और भजन से ऊपर ले जाता है तो वह जीते-जी नाम को पा लेता है। नाम के पा लेने का मतलब राधास्वामी अवस्था में रहना है।

राधास्वामी अवस्था यही चौथा पद है। इसमें रहते हुए मनुष्य शरीर के दुःख-सुख का अनुभव करते हुए भी समता की हालत में रहता है। इसी प्रकार मन के शोक, हर्ष, काम, क्रोध, लोभ और मोह में रहता हुआ भी उसमें फँसता नहीं है। इन सब अनुभवों को करता हुआ वह साक्षी बना रहता है और उसका मन टिक जाता है। मन के टिक जाने से उसमें उसके निजरूप यानि कि साक्षी भाव का अक्स पड़ता है और वह महसूस करता है कि शरीर, मन और आत्मा के आनन्द के अनुभव भी स्थायी नहीं हैं। केवल उसकी सुरत जो प्रकाशमय और शब्दमय है स्थायी है। उसके लिए शरीर, मन और आत्मा के खेल स्वप्न की भाँति हैं और वह खुद स्वप्न को देखने वाला शरीर की हद को अनुभव करने वाला, मन की बेहद शक्ति को अनुभव करने वाल और आत्मा की हद-बेहद से परे केवल आनन्द की अवस्था को अनुभव करने वाला इन तीनों से न्यारा अपने आप में पूर्ण अविनाशी और अभय तत्त्व है।

इसी साक्षी की अवस्था को मैंने हर वैसाखी के मासिक सत्संग में बताने की कोशिश की है। साक्षी गवाह को कहते हैं। एक सच्चा गवाह जब अदालत में गवाही देने जाता है तो वह किसी धर्म-ग्रन्थ की शपथ खाकर न्यायाधीश के सामने कहता है "मैं जो कुछ भी कहूंगा सच-सच कहूंगा।" इसके बाद वह प्रायः अपनी गवाही इस प्रकार देता है— **हजूर! मैंने उस दिन बाजार में अपनी दुकान पर राम और श्याम को आपस में बातें करते हुए देखा। यह दिन के 10 बजे का किस्सा है। राम ने श्याम से कटु भाषा में कहा कि वह उसके दिये गये हजार रुपये वापिस कर दे। श्याम ने उसके कटु वचनों को सुनकर राम को गालियाँ दीं। इस पर राम ने श्याम को जोर से मुक्के लगाये। श्याम ने भी**

राम को उसके नाक पर मुक्का दिया। राम का खून बहने लगा। उन दोनों ने चाकू निकाल लिये। दोनों ने एक-दूसरे पर वार किया। खून बहने लगा। इतने में पुलिस आ गई और दोनों को पकड़ कर ले गई। शायद पहले उन्हें हस्पताल में दाखिल करा दिया गया होगा" आदि-आदि। इस गवाही में गवाह ने तटस्थ रूप से मुक्केबाजी और चाकूबाजी और खून के बहने की दर्दनाक घटनाओं को कह सुनाया, लेकिन वह खुद इन घटनाओं से अलग-थलग रहा। यही हाल उस मनुष्य का होता है जो साक्षीभाव में रहता है यानि कि राधास्वामी अवस्था में रहता है।

इस अवस्था को पाने के लिए ही नामदान दिया जाता है। नामदान हरएक व्यक्ति को उसके स्वभाव के मुताबिक ही देना पड़ता है। यह ज़रूरी नहीं कि हरएक व्यक्ति को सुमिरन, ध्यान, भजन में लगा दिया जाये। जैसे कि ऊपर बताया गया है कि मनुष्य के तीन पहलू हैं—शरीर, मन और आत्मा। जो मनुष्य अधिकतर शरीर के बढ़ाने में और शारीरिक सुखों में रहता है, उसे सद्गुरु वक्त निष्काम सेवा में लगा देता है। ऐसा सत्संगी सेवा करते-करते समाधि की अवस्था में पहुँच जाता है। इसी प्रकार जो मनुष्य मन के दर्जे में यानि कि भावों में अधिक रहता है उसे सद्गुरु वक्त द्वैत की भक्ति में लगाता है। वह इस भक्ति और प्रेम में अपने आपको भूल जाता है और अन्त में अपने इष्ट को सबमें देखने लगता है। इसी हालत को चश्मे वाहदत या ब्रह्मदृष्टि कहते हैं। जिस मनुष्य में बुद्धि प्रधान होती है, वह अपनी बुद्धि को विकसित कर सकता है लेकिन किताबें पढ़ने मात्र से उसकी बुद्धि स्थिर नहीं हो सकती। उसे सद्गुरु अहंकार से छुड़ा कर शरणागत बनने में सहायता देता है। शरणागत होने से ही आत्मा के आनन्द और साक्षी-

भाव का अनुभव होता है।

मेरे कहने का मतलब यह है कि मनुष्य के शरीर, मन और आत्मा के अनुभवों को राधास्वामी अवस्था यानि कि साक्षीभाव की अवस्था की प्राप्ति में लगाने के लिए सद्गुरु के सत्संग की भारी जरूरत है। राधास्वामी मत एवं मानवता धर्म में सत्संग सद्गुरु और सतनाम के तीन सोपानों में से सत्संग का सोपान सबसे अधिक जरूरी है। सत्संग में सत्संगी धीरे-धीरे सद्गुरु से सच्चे ज्ञान को पाकर शरीर, मन और आत्मा से ऊपर उठ जाता है और उसका मन निर्मल हो जाता है। इसके बाद आन्तरिक सत्संग में यानि सुमिरन, ध्यान, भजन के द्वारा वह अपने अन्दर में भी अपने आप में ठहर जाता है और सन्तगति को पा जाता है। किन्तु सुमिरन, ध्यान, भजन के द्वारा अन्दर में शब्द में लीन होने के बाद भी वह जाग्रत अवस्था में शरीर और मन में फँस सकता है। यह भी हो सकता है कि वह घण्टों प्रकाश और शब्द में रहने के बाद में अपनी इस शब्द गति के पाने और उसमें रहने का अभिमानी हो जाये। इसलिए उसे इस दोष से बचने के लिए सदैव सद्गुरु के सत्संग में जाना चाहिए। सत्संग से सद्गुरु की Radiation (किरणों) के द्वारा और उसके सच्चे ज्ञान तथा अनन्त प्रेम की सत्संग में बहती हुई धारा के द्वारा उसे अन्दर में ऐसा सच्चा ज्ञान प्राप्त हो सकता है जिससे उसकी रहनी बदल जाती है सत्संग की महिमा को बताते हुए दाता दयाल जी महाराज ने लिखा है :—

"आ गये सत्संग में और संग सत का हो गया।
दुर्मति जाती रही और गुरु के मत का हो गया।।"

इसका मतलब यह है कि सद्गुरु के सत्संग में उसके परमतत्त्व पहलू से सम्पर्क हो जाता है और सत्संगी का

सद्गुरु को सर्वाधार मानकर अगाध प्रेम उमड़ने लगता है। इस प्रेम में वह शरीर, मन और आत्मा के सभी अनुभवों को भूलकर अपने आपको खो देता है। उसका अहंकार समाप्त हो जाता है। न ही केवल इतना, बल्कि जो जिससे अगाध प्यार करता है वह अपने प्रियतम के जैसा ही हो जाता है। क्योंकि सद्गुरु विशेषकर सत्संग देते समय निर्बन्ध अवस्था में राधास्वामी हालत में रहता है, इसलिए उससे प्रेम करने वाला सत्संगी भी सहज में ही केवल सत्संग में ध्यानपूर्वक बैठने से सद्गुरु जैसा ही हो जाता है। उसकी दुर्मति जाती रहती है अर्थात् इसके दोष देखने की दृष्टि एवं भेदभाव की दृष्टि खतम हो जाती है और वह गुरु की भाँति सत् में रहने लगता है। यहाँ पर "गुरु के मत का हो गया" शब्दों का अर्थ यह नहीं है कि वह किसी विशेष डेरे या सम्प्रदाय के गुरु का चेला बन गया। इसका मतलब तो यह है कि वह सद्गुरु जैसा सत् में रहने वाला ऐसा अपने आप में ठहरने वाला जीवन्मुक्त साक्षी बन गया और उसे अभयदान मिल गया।

जैसे मैंने पिछले वैसाखी के सन्देशों में बताया है कि परम दयाल जी महाराज ने वैसाखी के अवसर पर सत्संगों का जो सिलसिला चलाया है वह उनकी ऐसी बेनज़ीर देन है जिससे भारत के ही नहीं बल्कि विश्व के भ्रम में आये हुए जीव, मत-मतान्तरों और धर्मों के परस्पर झूठे झगड़ों से मुक्त होकर लाभ उठा सकते हैं और सच्ची मानवता पर चलकर लोक और परलोक दोनों बना सकते हैं। परम दयाल जी महाराज ने मुझे इसलिए इस सत्संग के सिलसिले को जारी रखने की आज्ञा दी और कहा कि मैं उनकी जगह पर मानवता मन्दिर में और विश्व भर में अपने अनुभवों को बाँट कर निःस्वार्थ रूप से सत्संगियों की महान् सेवा करूँ।

उन्होंने कई बार अपने पत्रों में मुझे लिखा था कि उनका चोला छोड़ने के बाद मैं फौरन अमेरिका को छोड़कर मानवता मन्दिर में आ जाऊँ। उन्होंने भाग्य को भी कहा था कि वह हमेशा सत्संगियों की निःस्वार्थ सेवा करे। मैं सच्चे दिल से परम दयाल जी महाराज के आदेशों पर चल रहा हूँ और देश-विदेश में दौरा करते समय आनन्दित रहता हूँ। मैं न भारत में न विदेशों में रास्ते में आने वाली रुकावटों से घबराता हूँ। जैसे कि कई बार मैंने बताया है कि मैं परम दयाल जी महाराज की कृपा से समय से पहले ही रिटायर होने के बावजूद भी आर्थिक दृष्टि से स्वतन्त्र हूँ। जितनी बार भी मैं विदेश के दौरे पर गया हूँ मैंने अपने लिए भी विदेश टिकट के लिए मानवता मन्दिर की धनराशि का प्रयोग नहीं किया। भाग्य माता जी तो भारत में और विदेश में हमेशा यात्रा का पूरा खर्चा टिकट आदि अपनी ओर से करती हैं। मैं "अपनी ओर से" शब्दों का प्रयोग इसलिए कर रहा हूँ क्योंकि उन्होंने राजस्थान में करीब तीस वर्ष अध्यापिका के पद पर सेवा करके काफी धनराशि कमाई और पेन्शन भी ले रही हैं। हमने अपनी दोनों की कमाई से जो जयपुर में बापूनगर में मकान बनवाया था, उसके बेचने से हमें जितनी धनराशि मिली उसका 75% भाग्य माता जी ने फरीदाबाद के मकान पर लगाकर उसे बड़े परिश्रम से बनवाया है। वास्तव में उन्हें भवन-निर्माण का काफी अनुभव रहा है। उन्होंने जयपुर में और अमेरिका में भी मकान बनवाये और खरीदे। इसलिए उन्हें मानवता मन्दिर को सुन्दर बनाने की धुन रहती है। इसी के फल-स्वरूप परम दयाल जी महाराज का मानवता मन्दिर आज दर्शनीय है। परम दयाल जी महाराज की आनन्द की धारा और उनके द्वारा प्रवाहित शान्ति के वातावरण में मन्दिर

की भौतिक सुन्दरता सत्संगियों के मन और उनको सुरत को सतलोक की ओर बढ़ने की प्रेरणा देती है।

मैं यह सब कुछ आपके लिए इसलिए लिख रहा हूँ कि आपको भी निःस्वार्थ काम करने की प्रेरणा मिलती रहे। मैंने कई बार कहा है कि यदि परम दयाल जी महाराज सत्य का अवतार होते हुए प्रेम और दया को प्रसारित करते थे तो मैं प्रेममयी दयाल धाम से निकलकर आप सबको सहज में उस ज्ञान के अनुभव को बाँटने के लिए आया हूँ जिससे आपका शरीर स्वस्थ आपका मन सुखी, आपकी आत्मा आनन्दित और आपकी सुरत निरत होकर आपको इस लोक यानि राधा का पूरा आनन्द देते हुए अरत अवस्था में पहुंचाये और आप असली राधास्वामी नाम को पा जायें। यह मासिक सन्देश हर वर्ष वैसाखी के अवसर पर विशेष रूप से मानव मन्दिर में प्रकाशित होता रहता है। इस सन्देश में सत्संग के दौरे के बारे में लिखने का स्थान ही नहीं रहता और न ही मासिक सत्संगों में विशेष विषय की व्याख्या करने का अवसर मिल पाता है। आप मेरे इस इशारे को समझ गये होंगे। मैं आपसे क्षमा चाहता हूँ कि इस मासिक सन्देश में तपः की चर्चा नहीं हो सकेगी। मुझे पूरी आशा है कि इस वैसाखी के सन्देश से आपको विशेष आनन्द मिलेगा और आप तीव्र जिज्ञासा से अगले महीने के मासिक सन्देश का इन्तज़ार करेंगे। इन शब्दों के साथ मैं आपको इस आध्यात्मिक नये वर्ष की शुभ कामनाएँ भेजता हूँ और चाहता हूँ कि आप इस वैसाखी से लेकर अगली वैसाखी तक शरीर, मन, आत्मा और सुरत की समता को प्राप्त करें।

सबको राधास्वामी !

आपका फकीरमय
मानव

पत्र महाराज जी के नाम

राधास्वामी !

सरसावा
8-3-87

मेरे परम प्रिय श्री सद्गुरु जी के चरण-कमलों में मेरा कोटि-कोटि प्रणाम !

महाराज जी आप यहाँ पर सरसोंहेड़ी से इतनी जल्दी क्यों चले गये । आपके तीनों सत्संग मैंने सुने बहुत अच्छे लगे । मेरे अच्छे सद्गुरु आपने इतने थोड़े समय में भी मेरे ऊपर जो इतनी कृपा इतनी दया इतना सारा प्यार दिया भगवान् के सिवा कोई नहीं कर सकता । मेरे प्यारे महाराज रामायण में मैंने कई बार पढ़ा था भगवान् बड़े दयालु होते हैं बड़े कृपालु होते हैं यह आपके पास आते ही पता चल गया । महाराज जी एक बात बताइये आपके चरण-कमलों के छूते ही मेरा शरीर क्यों काँपने लगा और मैं रोने क्यों लग गई थी । आपने अपनी परम कृपा से मुझे अपना लिया अब वो कृपा भुला कर अनाथ न कर देना ।

फकीर बाबा जी की फोटो के सामने मैंने कई बार प्रार्थना की कि बाबा आप मेरा उद्धार किये बिना इस दुनिया से क्यों चले गये क्या आपको पता नहीं था कि मैं भी अभागिन इस दुनिया में हूँ । इसलिए ही आपके रूप में आकर मुझे अपनी परम कृपा से अपना लिया । गुरु महाराज मेरे भगवान् मैंने आपको बहुत तड़पने के बाद पाया है इसलिए एक मिनट भी आपको भूलना नहीं चाहती हूँ ऐसा वरदान दे दीजिये कि मैं आपको एक क्षण भी न भूल सकूं ।

महाराज जी मैं चाहती हूँ कि मैं हमेशा आपके दर्शन करती रहूँ और आपका सत्संग सुनती रहूँ क्या ऐसा सम्भव हो सकता है ? महाराज जी आपका जो परम सहारा मुझे

मिल गया अब मुझे दुनिया में कुछ नहीं चाहिए मुझे सब कुछ मिन गया है। महाराज जी अब आपका दर्शन मुझे कब मिलेगा जल्दी ही दर्शन दीजियेगा। महाराज जी मुझे अपना ढेर सारा आशीर्वाद दीजिये ताकि आपने जो मुझे रास्ता दिखाया है उस पर दृढ़ता-पूर्वक चलकर अपनी मंज़िल पा सकूं।

महाराज जी जो मन्त्र आपने दिया था उसका रोज़ अभ्यास करती हूँ। पहले दिन तो ऐसा लगा कि मेरे पूरे शरीर और सिर में पता नहीं क्या हो रहा है पूरा शरीर सिर में इकट्ठा हो रहा है दूसरे दिन पूरा शरीर गर्म हो गया और काँपने लगा अगले दिन चेहरा पूरा बहुत गर्म हो गया। अगले दिन मुझे ऐसा लगा कि मुझे सोहम् कहने की कोई आवश्यकता नहीं है मेरे पूरे शरीर में ये शब्द अपने आप ही गूंज रहा था। एक दिन अभ्यास के समय मैंने आपको याद किया और कहा कि अभ्यास कैसे होगा तो आप आ गये और अपने हाथ से पता नहीं क्या हटाने लगे और किसी से मानो आप कह रहे हो कि हटो इसे आने दो मुझे कहा आते जाओ आते जाओ। कभी अभ्यास में मन्दिर उसमें कृष्ण की मूर्ति शिवलिंग शंकर पार्वती, गणेश जी, हनुमान जी ऐसा दीखता है। कभी-कभी अभ्यास बनता ही नहीं तो मैं दुःखी हो जाती हूँ फिर आपका प्रेरणादायक वो word याद आ जाता है No hurry no worry बस मैं खुश हो जाती हूँ। महाराज जी परसों मुझे अभ्यास में ऐसा लगा कि अचानक मेरी आँखों के सामने और पूरे माथे में तेज़ रोशनी आ गई मैंने सोचा कि मेरे कमरे में इतनी तेज़ रोशनी किसने कर दी और मैंने देखने के लिए जल्दी से आँखें खोल दीं कमरे में तो अन्धेरा था सोने ले पहले मैं अभ्यास करती हूँ। महाराज जी अब तो जगह ही नहीं है कैसे लिखूं बाकी

अगले पत्र में। मेरे पत्र का जवाब बहुत जल्दी दीजियेगा नहीं तो मैं निराश हो जाऊंगी। आपके पत्र का इन्तज़ार बेसब्री से कर रही हूँ। मेरे दोनों बेटे विजेन्द्र, रवि, मेरे पति सुरेश जी की तरफ से आपके चरण-कमलों में बारम्बार प्रणाम। साधना बहिन को मेरी तरफ से राधास्वामी। साधना बहिन शब्द बहुत अच्छा पढ़ती हैं।

आपकी बेटी
निर्मला

पत्र द्वारा ज्ञान

मेरी प्यारी बेटी निर्मला

राधास्वामी,

परम दयाल जी सहाई !

तुम्हारे पत्र से यह ज़ाहिर होता है कि तुम में अगाध श्रद्धा है। इसी कारण तुम्हें अच्छे-अच्छे अनुभव हो रहे हैं और होते रहेंगे। वास्तव में परम दयाल जी महाराज की सरसोंहेरी और आस-पास के सत्संगियों पर विशेष दया और अनुकम्पा थी। इसी प्रकार आप सबका उन पर अगाध विश्वास था। मुझे अच्छी तरह याद है कि सरसोंहेरी में केवल एक स्त्री ऐसी थी जो परम दयाल जी के अलावा देवी की पूजा किया करती थी। उसने परम दयाल जी के शरीर में होते हुए यह अनुभव किया कि परम दयाल जी उसकी पूजा के कमरे में प्रकट हुए और उन्होंने देवी के सामने जलते हुए दीपक को ठोकर लगाकर बुझा दिया। इसके बाद उस स्त्री ने परम दयाल जी महाराज की अनन्य भक्ति की। सरसोंहेरी के बच्चे-बच्चे का अगाध विश्वास है कि परम दयाल जी महाराज सच्चे सद्गुरु वक्त थे और अब भी मौजूद हैं। उनके इस विश्वास और प्यार के कारण

परम दयाल जी महाराज सरसोंहेरी के सत्संगियों, बच्चों और सभी त्यागी बन्धुओं से अगाध प्रेम रखते थे। बड़े बाबू जी श्री कृष्ण दत्त त्यागी को परम दयाल जी हीर कहते थे। उनका ऐसा कहना इस बात को साबित करता था कि श्री कृष्ण दत्त त्यागी से लेकर सरसोंहेरी में रहने वाले छोटे बच्चों तक सच्चे प्यार का नमूना हैं।

मैंने भी पहली बार ऐसा ही अनुभव किया। श्री कृष्ण दत्त त्यागी का यह विश्वास है कि परम दयाल जी जैसा सच्चा सद्गुरु वक्त इस जगत् में कहीं नहीं मिल सकता और इसी कारण उनका यह भी अगाध विश्वास है कि परम दयाल जी फकीरमय, मानवमय मौजूद हैं। इसी प्रकार श्री देवदत्त त्यागी, ज्ञानेश्वर त्यागी, प्रधान जी और इन सबके परिवार एक अटट और सच्चे प्यार में मेरे साथ वैसे ही बँधे हुए हैं जैसे कि वह परम दयाल जी के साथ बँधे हुए थे। पिछले पाँच वर्षों में जब-जब भी मैं सरसोंहेरी सत्संग देने के लिए गया हूँ आप सब लोगों ने मेरी विदाई पर ऐसे आँसू बहाये जैसे कि विवाह के समय बेटी की विदाई पर बहाये जाते हैं। इन अनुभवों के कारण मैं स्वयं अपने आपको सरसोंहेरी के परिवारों का अंग मानता हूँ।

मैं सच्चे दिल से फकीरमय होता हुआ दिल से चाहता हूँ कि आप सबका यह विश्वास और सच्चा प्यार बना रहे। मैंने तुम पर कोई विशेष दया नहीं की। केवल आपकी श्रद्धा और विश्वास से अभिभूत होकर स्वाभाविक व्यवहार करता हूँ। क्योंकि आपकी भक्ति अटूट है और मैं भी महाराज जी की आज्ञा का पालन अक्षरशः कर रहा हूँ और इसी कारण आपने लिखा "महाराज! रामायण में मैंने कई बार पढ़ा था भगवान् बड़े दयालु होते हैं, बड़े कृपालु होते हैं यह आपके पास आते ही पता चल गया। महाराज जी एक

बात बताइये आपके चरण-कमलों के छूते ही मेरा शरीर क्यों काँपने लगा और मैं ऐसे क्यों लग गई थी ?" इसके उत्तर में मैं यह कह सकता हूँ कि यह तुम्हारे परम दयाल जी के सत्संगों के और पूर्व जन्म के संस्कारों का प्रभाव है। ऐसे भी लोग हैं जो परम दयाल जी के साथ बीसियों वर्ष रहे हैं, उन्हें यह अनुभव न परम दयाल जी के सम्बन्ध में हुआ न मेरे सम्बन्ध में हुआ। ऐसे भी पुराने सत्संगी हैं जिन्होंने परम दयाल जी के सम्बन्ध में मेरे सत्संगों को सुनकर आँसू बहाये और स्वीकार किया कि उन्होंने उन्हें जीते-जी नहीं पहचाना था। तुम्हारे आँसू और तुम्हारे शरीर का कम्पन एक ऐसी रोमाञ्चकारी अवस्था का नमूना है जिसका एक सच्चा भक्त और सच्चा सन्त अपने इष्ट के सामने अनुभव करता है। तुम्हारे पूर्व जन्म के संस्कार और तुम्हारी मन की पवित्रता या भोलापन इस अनुभव के दो आधार हैं। तुम निश्चित रूप से गृहस्थ का कर्त्तव्य निभाते हुए राधास्वामी अवस्था को पा जाओगी यह मेरा पर्ण विश्वास है।

मैं यह सब कुछ तुम्हें अपने अनुभव के आधार पर लिख रहा हूँ। पाँच वर्ष की आयु से मुझे ऐसे अनुभव होते आये हैं। मैं जब भी मीरा का कोई गीत सुनता था, पुलकित हो जाता था, जब भी तुलसी रामायण में दशरथ का विलाप पढ़ता था मेरा अश्रुपात हो जाता था। 1954 में मैं अपने विद्यागुरु डा० पी. टी. राजू, उनकी पत्नी और चार महाराजा कालेज के छात्रों के साथ श्री लंका से अखिल भारतीय दर्शन परिषद् के सम्मेलन से लौटते हुए पाण्डिचेरी में श्री अरविन्द के आश्रम में रुका। मैं पाण्डिचेरी में पहली बार गया था। हम सब श्री अरविन्द की फूलों से सजी हुई समाधि पर गये। जब हम परिक्रमा कर रहे थे तो मुझे सारे शरीर में

रोमाञ्च का अनुभव हुआ और मेरे सिर से लेकर पांव तक एक आनन्द की लहर दौड़ गई। मैंने डा० पी. टी. राजू समेत सबसे पूछा और पता चला कि उनमें से किसी को ऐसा अनुभव नहीं हुआ था।

इसी प्रकार श्री अरविन्द की उत्तराधिकारिणी पवित्र माँ (Holimother) अक्सर किसी से मिलती नहीं थीं। मैंने उन्हें लिखित रूप में प्रार्थना की कि वह हमें मिलें। उन्होंने मेरी प्रार्थना स्वीकार की और हम सबको अलग-अलग मिलीं। उस समय उनकी आयु 80 वर्ष से ऊपर थी। उन्होंने मेरी आँखों में आँखें डालकर प्रेममयी दृष्टि से कहा "बेटा तुम्हें जगत् कल्याण का कार्य करना होगा। इन संस्कारों से ओत-प्रोत मैं एक सहज आनन्द का जीवन व्यतीत करता हुआ परम दयाल जी को 1959 में स्वप्न में मिलने के बाद 1963 में 25 सितम्बर के दिन हिन्दु महा सभा भवन में परम दयाल जी के सन्मुख आया। केवल तभी मुझे अनुभूत हुआ कि मैं एक सच्चे सद्गुरु वक्त की शरण में पहुँच गया हूँ।

इसके बाद मैं भी परम दयाल जी को कभी न भुला सका। उन्होंने मुझे 1980 में क्लीवलैण्ड अमेरिका में अभय-दान दे दिया।

पत्र बहुत लम्बा हो चुका है। संक्षेप में मैं तुम्हें यह कहना चाहता हूँ कि तुम्हें तड़पने की आवश्यकता नहीं और तुम्हें अपने गृहस्थ के कर्त्तव्य को तिलाञ्जलि नहीं देनी है। तुम अभ्यास करती रहो और मेरे सत्संग पढ़ती रहो। सबसे महत्त्वपूर्ण बात ये है कि तुम "जल्दी नहीं चिन्ता नहीं" (No hurry No worry) के मन्त्र का पालन करती रहो। तुम्हें सभी अनुभव हो जायेंगे। लोक भी बन जायेगा और परलोक भी बन जायेगा। मझे पूरी आशा है कि तुम्हें इस

पत्र से पूरी तसल्ली मिलेगी। तुम्हारा सन्देश साधना को दे दिया गया है। जो कुछ तुमने शब्द के पढ़ने के बारे में लिखा है वह भी तुम्हारे विश्वास के आधार पर पूर्णतया सत्य है। बहुत से लोग ऐसा ही विचार व्यक्त करते हैं। दिली आशीर्वाद और राधास्वामी !

तुम्हारा फकीरमय
मानव

शोक-समाचार

सभी सत्संगी भाई-बहनों को अत्यन्त दुःख के साथ सूचित किया जा रहा है कि मानवता मन्दिर ट्रस्ट के प्रेजिडेण्ट श्री के. एम. परदेसी जी की धर्मपत्नी रानी सरला का उनके गाँव फुगलाना (होशियारपुर) में दिनांक 14-3-87 को अचानक स्वर्गवास हो गया।

उनके आकस्मिक निधन पर मानवता मन्दिर परिवार हार्दिक शोक प्रकट करते हुए परम पिता दयाल मालिक से प्रार्थना करता है कि दिवंगत आत्मा को शान्ति दें तथा उनके शोकाकुल परिवार और सम्बन्धी जन को इस असह्य क्षति के सहन करने की शक्ति प्रदान करें।

जनरल सेक्रेटरी

सूचना

मानवता मन्दिर होशियारपुर के ट्रस्टियों और जनरल बॉडी के मेम्बरों की मीटिंग 14 अप्रैल 1987 को दिन के 12-30 बजे मानवता मन्दिर सुतहरी रोड, होशियारपुर में होगी, सभी महानुभावों से प्रार्थना है कि ठीक समय पर पधारने की कृपा करें।

जनरल सेक्रेटरी

परमसन्त फकीर लाइब्रेरी

मानवता मन्दिर, होशियारपुर को भक्त नारायण दास मुकरन्द नगर (कन्नौज) वालों का अनुपम

भारतीय संस्कृति के प्राचीन केन्द्र कन्नौज नगर के ग्राम मकरन्द नगर में भक्त नारायण दास जी रहते थे और सत्संगी श्री मनोहर लाल मौर्य के पुरखों के यहाँ खेतिहर मजदूरी करते थे। वे पढ़े-लिखे बिलकुल नहीं थे किन्तु साधु सत्संग के प्रभाव से अद्भुत रूप में अक्षर ज्ञान हुआ और सन्तमत (राधास्वामी मत) की पुस्तकें पढ़ने लगे। इसी क्रम में वे परमसन्त परम दयाल जी महाराज के सम्पर्क में आये। वे परम दयाल जी महाराज को अपने गाँव (छोपड़े) में बुलाने लगे। पहली बार जब महाराज जी उनके गाँव गये, उसी रात भक्त नारायण दास की धर्मपत्नी को स्वप्न हुआ कि परम दयाल जी महाराज काली कार में आ रहे हैं और साथ में भण्डारी माता व गोपाल दास हैं, जब कि महाराज जी का प्रकाशित प्रोगाम के अनुसार रेल-गाड़ी के द्वारा आना निश्चित था। स्वप्न में उन्होंने देखा कि रास्ता ठीक न होने के कारण कार रुक गई है तो अपने पति से बताया और नारायण दास कुछ लोगों के साथ फावड़ा लेकर वहाँ पहुँच गये। थोड़ी ही दूर पर उन्हें परम दयाल जी महाराज के दर्शन काली कार में हुए और रास्ता साफ कर वे कार को अपने घर ले आये। जब यह घटना परम दयाल जी महाराज को सुनाई गई तब उन्होंने भक्तिन व भक्त दम्पति की सराहना की और आशीर्वाद दिया। भक्त नारायण दास अपनी मज़दूरी से दो-एक रुपये बचा

कर सन्तमत की पुस्तकें खरीदते और स्वयं पढ़कर गाँव में प्रचार करते। इस प्रकार कन्नौज में उन्होंने अध्यात्म ज्ञान को ज्योति जलाये रखी। उनके स्वर्गवास के बाद उनकी धर्मपत्नी ने उनकी सारी पुस्तकों का दान फकीर लाइब्रेरी, मानवता मन्दिर, होशियारपुर को कर दिया। भक्त नारायण दास तथा उनकी धर्मपत्नी का यह आदर्श त्याग, तप और सत्य-प्रेममय जीवन हम सबके लिए अनुकरणीय है। मानवता मन्दिर परिवार मालिक से उनकी गोलोकवासी आत्मा की परम शान्ति की कामना करते हुए उनकी साध्वी धर्मपत्नी के प्रति अपना हार्दिक धन्यवाद और आभार प्रकाश करता है।

एस. एल. सेठी
जनरल सेक्रेटरी

महत्त्वपूर्ण सूचना

सभी सत्संगियों व प्रेमीजन को सूचित किया जाता है कि परमसन्त हजूर परम मानव मानव दयाल डा० ईश्वर चन्द्र शर्मा जी महाराज का सत्संग रविवार दिनांक 19 अप्रैल 1987 को प्रात: 9 बजे से 12 बजे तक सलवान पब्लिक स्कूल, ओल्ड राजेन्द्र नगर, नई दिल्ली में आयोजित किया गया है। स्मरण रहे कि हजूर महाराज जी इस सत्संग के फरमाने के बाद ही दो माह की बिदेश यात्रा पर अमेरिका प्रस्थान कर रहे हैं। केत: सभी प्रेमी सत्संगी जन इस शुभ अवसर पर हजूर महाराज जी के सत्संग व आशीर्वाद से लाभ उठावें।

बाहर से आने वाले सत्संगी जन के ठहरने व भोजन का प्रबन्ध अन्तर्राष्ट्रीय मानवता सोसाइटी, दिल्ली की तरफ से होगा।

एस. एल. सेठी
जनरल सेक्रेटरी

अति आवश्यक सूचना

मानवधाम

"मानवधाम" कालोनी के लिए ज़मीन का क्रय अनुबन्ध (Agreement to sell) अन्तर राष्ट्रीय मानवता सोसाईटी ने कर लिया है। लगभग एक महीने की अवधि में ज़मीन का बैनामा सोसाईटी को कर लेना है। अन्यथा सोसाईटी को हर्जा/खर्चा देना पड़ सकता है। कुछ सत्संगियों ने अपने-अपने प्लाट के लिए तीन हज़ार रुपये की अग्रिम राशि सोसाईटी को भेजी है।

"मानवधाम" के लिए प्रस्तावित ज़मीन राजघाट, दिल्ली से लगभग 27 किलोमीटर दूर; मेरठ रोड पर, मौज़ा दुहाई में लबे सड़क स्थित है। पलाट, "मानवधाम" में पक्के पट्टे पर (on perpetual Lease) दिया जायेगा। पलाट लेने वाला व्यक्ति सोसाईटी की अनुमति से ही अपने पलाट की किसी अन्य व्यक्ति को हस्तान्तरित (Transfer) कर सकता है।

पलाट के लिए, जिन व्यक्तियों ने सोसाइटी को तीन हज़ार रुपये की अग्रिम-राशि भेज दी है, उनसे निवेदन है कि 30-4-1987 तक, 27000/- रुपये की शेष धन-राशि सोसाईटी को अवश्य भेज दें। यदि किसी कारण वे एक-मुश्त 27000/- रुपया न भेज पायें तो वे कम से कम 15000/- रुपये 30-4-1987 तक अवश्य भेज दें तथा शेष धन राशि 12000/- रुपये तीन महीने के अन्दर भेज दें।

जिन को "मानवधाम" में प्रस्तावित ज़मीन पसन्द न आये या सोसाईटी की उपरोक्त शर्तें मंज़ूर न हो वे 30-4-87 तक अपनी दी हुई 3000/- रुपये की अग्रिम धन-राशि वापस लेकर अपने पलाट के अलाटमेन्ट को रद्द करा सकते हैं।

सेक्रेटरी :
मानवधा मन्दिर, होशियारपुर

शुभ सूचना

सभी भाई-बहनों को सूचित किया जाता है कि मानवता मन्दिर होशियारपुर (पंजाब) में प्रति वर्ष की भाँति इस वर्ष भी वैशाखी पर्व का महोत्सव दिनांक 13 व 14 अप्रैल 1987 को बड़े धूम-धाम और उत्साह के साथ मनाया जायेगा ।

बाहर से आने वाले सज्जनों के ठहरने व भोजन का प्रबन्ध ट्रस्ट की तरफ से होगा। कृपया अपना बिस्तर साथ लावें ।

सत्संग कार्य-क्रम

सोमवार 13 अप्रैल—प्रात: 8 बजे से 11 बजे तक
सायं 4 बजे से 6 बजे तक
मंगलवार 14 अप्रैल—प्रात: 8 बजे से 11 बजे तक
सायं 4 बजे से 6 बजे तक

एस० एल० सेठी
जनरल सेक्रेटरी

प्रार्थना

राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी ।
अलख अगम और अनामी ।
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी ।
परम सन्त का रूप धरा, जीवों पर उपकार किया
सीधा सच्चा मार्ग दिया, आपे घर पद धामी
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी
बन कर आपे परम फ़कीर, हरने सब जीवों की पीर ।
परम दयालु दानी वीर, नाम दान के दानी
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी ।
राम भी हो और कृष्ण भी तुम ।
तुम महावीर और बुद्ध गौतम ।
अक्षर ब्रह्म और पुरुषोत्तम, सब नामों में अनामी ।
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी ।
मानवता का किया प्रचार, निज अनुभव का दे दिया सार ।
ऐसे गुरु को बारम्बार, नमामि नमामि नमामि ।
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी ।
दाता दयाल के प्यारे तुम, मानव के रखवारे तुम ।
निर्गुण और सगुण भी तुम, सब के अन्तर्यामी ।
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी

सूचना

सभी सत्संगियों को सूचित किया जाता है कि शताब्दी ग्रन्थ के प्रकाशक के बीमार हो जाने के कारण ग्रन्थ के प्रकाशन में बिलम्ब हो गया है । यह ग्रन्थ गुरु पूर्णिमा तक तैयार हो जायेगा । देरी के लिए क्षमा ।

Regd. No. 26265/74
Manav Mandir

APRIL 10th 1987
NWHSP--7

Address

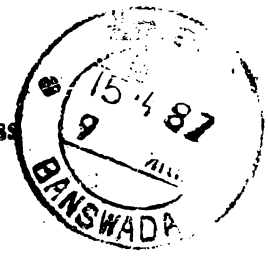

To

938 Sh. Shinde Vithal
S/o Arjan Rao Gouli Gudda
Banswada Post &
Tq. Banswada Distt. Nizamabad
A P

Phone : 2022

From

MANAVTA MANDIR
SUTEHRI ROAD,
HOSHIARPUR-146001

Shiv Dev Rao Press Manavta Mandir, Hoshiarpur (Pb.)

अति आवश्यक सूचना

जिन सत्संगियों ने "मानवधाम" कालोनी आश्रम में
पने प्लाट के लिए पंजीकरण (Registration) कराया
और जिन्होंने अब तक अपनी दूसरी किश्त सोसाइटी को
ं भेजी है, उनसे निवेदन है कि शीघ्रातिशीघ्र अपनी दूसरी
त निम्नलिखित पते पर सोसाइटी को भेज दें अन्यथा
ाइटी इस सम्बन्ध में अपने कार्यक्रम को पूरा करने में
र्थ होगी। ऐसी स्थिति में अन्य सत्संगी आवेदकों को
धा होगी और सोसाइटी को भी हर्जाना देना पड़
है।

अतः उन सत्संगी आवेदकों से जिनकी दूसरी
नहीं पहुँची है, पुनः निवेदन है कि वे अपनी दूसरी किश्त
तिशीघ्र भेजकर सोसाइटी को अपना योगदान दें।

Sh. Rishi Parkash Gupta
O-41, Vijay Vihar,
Uttam Nagar, New Delhi-110059.

सेक्रेटरी
अन्तर्राष्ट्रीय मानवता सोसाइटी,
दिल्ली।

Regd. No. 26265/74 MAY 10th

Manav Mandir NWHSP

Address

To

503310 6.5.81 11-15 HRS DELY. PITLAM

415 President Radha-Swami
Sat Sang PITLAM
Distt. Nizamabad (A.P.)

Phone : 2

From :

MANAVTA MANDIR
SUTEHRI ROAD,
HOSHIARPUR-146001.

Shiv Dev Rao Press, Manavta Mandir, Hoshiarpur (P

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL